नई दिल्ली
रविवार, 01 फरवरी, 2026, मूल्य-15.00
राष्ट्रीय
वर्ष-8 अंक-16 पृष्ठ- 8
RNI: DELHIN / 2018 / 76679
Postal Reg. No. DL(C)-05/1425/2025-27
License To Post Without Pre Payment No. U(C)-164/2025-27
Magazine Post Reg. No. DL(DS)-31/MP/25-26-27

संडे नवजीवन

Freedom is in Peril, Defend it with all your might Jawaharlal Nehru

काशी का चेहरा बदलने की कोशिश में इसके विरासती प्रतीक ही किए जा रहे तहस-नहस 3
मनरेगा का असली मकसद ग्राम स्वराज 5

दक्षिण का कुंभ 8

www.navjivanindia.com | @navjivanindia | www.nationalheraldindia.com | www.qaumiawaz.com

फॉर्म 7 वोटर निपटाने का नया हथियार है?

असम में भ्रष्टाचार और खराब प्रदर्शन के आरोपों से जूझती भाजपा को जीत के लिए 'फर्जी' मतदाता सूचियों का ही भरोसा रह गया लगता है

एसआईआर विशेष गहन पुनरीक्षण कार्य में लगे बीएलओ

सौरभ सेन

निर्वाचन आयोग ने 2023 में जब फॉर्म 7 से संबंधित नियमों में चुपके से बदलाव कर दिया, किसी ने इस पर ध्यान नहीं दिया। फॉर्म 7 वह हथियार है जिसके जरिये कोई मतदाता किसी अन्य व्यक्ति का नाम मतदाता सूची में शामिल होने को चुनौती दे सकता है, उसका नाम हटाने के लिए आवेदन कर सकता है।

पहले फॉर्म 7 जमा करने का यह अधिकार सिर्फ पड़ोसी या एक ही मतदान केन्द्र पर पंजीकृत मतदाता को ही हासिल था। नियम 2023 में बदल गया और नए नियम के अनुसार किसी भी विधानसभा क्षेत्र के किसी भी बूथ में पंजीकृत किसी भी मतदाता को फॉर्म 7 जमा करने का अधिकार मिल गया। एक और महत्वपूर्ण बदलाव यह हुआ कि हर आवेदक को असीमित संख्या में फॉर्म जमा करने की अनुमति मिल गई। दोनों बदलावों को कहीं से चुनौती नहीं मिली और यह दोनों 2023 के अंत से प्रभावी हैं।

जैसा कि असम में चल रहे विशेष पुनरीक्षण (एसआर) और 12 राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों में विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) से स्पष्ट हो चुका है, लगभग सभी आपत्तियों का शिकार मुस्लिम, दलित या आदिवासी मतदाता हुए हैं, और कई आपत्तियां तो भोले-भाले मुस्लिम मतदाताओं के नाम और ईपीआईसी (मतदाता का फोटो पहचान पत्र) नंबरों का गलत इस्तेमाल करके दर्ज की गई हैं।

29 जनवरी को कांग्रेस के संगठनात्मक सचिव के.सी. वेणुगोपाल ने चुनाव आयोग का ध्यान भाजपा द्वारा "भारी पैमाने पर फॉर्म 7 के दुरुपयोग" की ओर दिलाया, जिसका मकसद विपक्ष समर्थक 'संदिग्ध मतदाताओं' को मतदाता सूची से हटाना था। वेणुगोपाल ने इस दुरुपयोग को विस्तृत, सुनियोजित और व्यापक बताया और आरोप लगाया है कि भाजपा ने अपने कार्यकर्ताओं को, विशेष रूप से चुनाव वाले राज्यों में, बड़ी संख्या में आपत्तियां दर्ज कराने के काम में लगाया है। उन्होंने बताया कि इस केन्द्रीयकृत धोखाधड़ी का एक अहम तत्व यह सुनिश्चित करना है कि वैध मतदाताओं को आपत्तियों की सूचना देने वाले नोटिस उन तक कभी पहुंच ही न सकें।

वेणुगोपाल कहते हैं कि यह धोखाधड़ी न तो किसी एक क्षेत्र तक सीमित है और न ही कहीं अलग-थलग चल रही है। केरल, गुजरात, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़ और असम से मिली रिपोर्टों में भी ऐसा ही पैटर्न दिखता है। इनमें आम बात यह है कि फॉर्म 7 बड़े पैमाने पर छापे जा रहे हैं, जिसमें अस्पष्ट नाम और हस्ताक्षर, मनमाने या अमान्य फोन नंबर और अन्य वैध मतदाताओं के ईपीआईसी नंबरों का इस्तेमाल हो रहा है।

गणतंत्र दिवस पर गुजरात के जूनागढ़ के लोक कलाकार हाजी रामकडु को 'पद्म श्री' से सम्मानित किया गया। जूनागढ़ में जन्मे रामकडु पिछले 70 वर्षों से एक ही घर में रह रहे हैं, राज्य में उनकी काफी शोहरत है और गौशालाओं के लिए 25,000 चंदा जुटाने वाले कार्यक्रमों में निःशुल्क प्रस्तुति देने का श्रेय उन्हें जाता है। इसके बावजूद, भाजपा पार्षद संजय मनवार ने पुरस्कारों की घोषणा से 7 दिन पहले ही मतदाता सूची में उनके नाम पर आपत्ति जताते हुए फॉर्म जमा कर दिया।

जब खबर फैली और लोगों का आक्रोश बढ़ने लगा, तब मनवार ने बेशर्मी से कहा कि कलाकार के आधार कार्ड पर मीर हाजी कसम का नाम था, जबकि उनके ईपीआईसी कार्ड में उनका नाम हाजी राठौड़ दर्ज था। सरकारी दस्तावेजों में मिलने वाली ऐसी विसंगतियों का इस्तेमाल अब हथियार के रूप में हो रहा है। विवाहित महिलाओं को अपने नाम में हुए बदलावों को समझाना विशेष रूप से कठिन हो जाता है। पश्चिम बंगाल में, जब सलमा सरदार और सईदा मोल्ला का नाम बदलकर सलमा और सईदा नस्कर कर दिया गया, तो आपत्तियां उठाई गईं।

> असम में एसआर और राज्यों में एसआईआर से स्पष्ट हो चुका है कि आपत्तियों के शिकार मुस्लिम, दलित या आदिवासी मतदाता हुए हैं। कई आपत्तियां तो भोले-भाले मुस्लिम मतदाताओं के नाम और ईपीआईसी नंबरों का गलत इस्तेमाल करके दर्ज की गई हैं

राजस्थान के हवामहल इलाके में भाजपा पदाधिकारियों द्वारा बूथ स्तर अधिकारियों (बीएलओ) पर मुस्लिम मतदाताओं के नाम हटाने के लिए दबाव डालने के आरोप सामने आए। हवा महल मुस्लिम बहुल निर्वाचन क्षेत्र है और यहां भाजपा ने 2023 में महज 974 वोटों के अंतर से जीत हासिल की थी। सोशल मीडिया पर वायरल हो रहे एक वीडियो में बीएलओ कीर्ति कुमार यह आरोप लगाते सुने जा सकते हैं कि वरिष्ठ अधिकारियों ने किस तरह उन पर 470 मतदाताओं (जो उनके बूथ के लगभग 40 प्रतिशत हैं) के खिलाफ आपत्तियों पर कार्रवाई का दबाव बनाया। वीडियो में कुमार को कहते हुए सुना जा सकता है, "मैं यह करने के बजाय आत्महत्या करना पसंद करूंगा।"

मध्य प्रदेश में कांग्रेस ने आरोप लगाया कि भिंड, सिंगरौली और सीहोर में भाजपा कार्यकर्ताओं की ओर से बूथ-दर-बूथ आपत्तियों वाले सैकड़ों फार्म जमा कराए जा रहे हैं। पश्चिम बंगाल में, तृणमूल कांग्रेस ने भाजपा कार्यकर्ताओं द्वारा ले जाए जा रहे फॉर्म 7 की हजारों प्रतियों से भरे एक वाहन को पकड़े जाने की सूचना दी और उसका वीडियो भी जारी किया। मुर्शिदाबाद में भाजपा समर्थकों द्वारा बड़ी संख्या में फॉर्म 7 आवेदन जमा करने के प्रयास के बाद झड़पें हुईं।

चुनाव आयोग तर्क दे रहा है कि फॉर्म 7 जमा करने मात्र से नाम स्वतः ही नहीं हटाए जाते। फर्जी आधार पर फॉर्म 7 पर आपत्ति दर्ज करना दंडनीय अपराध है और जिन मतदाताओं के नाम इस तरह हटाए जाते हैं, वे कानून का सहारा ले सकते हैं।

दरअसल, असम में जो कुछ चल रहा है, वह चिंताजनक होने से कहीं आगे की बात है, क्योंकि मुख्यमंत्री हिमंता बिस्वा सरमा ने तो कथित तौर पर 'मियां लोगों' के खिलाफ जेहाद ही छेड़ दिया है, जो बांग्लादेसी मुसलमानों के लिए इस्तेमाल किए जाने वाला अपमानजनक शब्द है।

सरमा तो पहले भी खुले तौर पर यह कहने से पीछे नहीं रहे रहे हैं कि, "हां, हम कुछ 'मियां वोट' चुराने की कोशिश कर रहे हैं हमने ऐसी व्यवस्था की है कि वे असम में तो वोट नहीं ही दे पाएंगे जब असम में विशेष गहन पुनरीक्षण होगा, तो चार से पांच लाख मियां वोट काटने होंगे।"

श्रीभूमि (पूर्व में करीमगंज) जिले की मतदान अधिकारी सुमोना रहमान चौधरी और 14 अन्य मतदान अधिकारियों को 19 जनवरी को प्रशिक्षण सत्र के लिए बुलाया गया था। सुमोना वहां पहुंचीं, अधिकारियों ने उन्हें आपत्ति प्रपत्रों (फॉर्म 7) का एक बंडल सौंप दिया, जिसमें उनके बूथ में 133 मतदाताओं को शामिल करने पर आपत्ति जताई गई थी। कुछ ब्योरा पहले से मुद्रित था, कुछ हाथ से लिखा हुआ।

सभी 133 आपत्तियां एक ही व्यक्ति ने दर्ज कराई थीं, जिसका दावा था कि करीमगंज उत्तर विधानसभा क्षेत्र के श्रीमंत कनिश्लाई गांव में चौधरी के बूथ के 133 मतदाता (सभी मुस्लिम) या तो मर चुके हैं, स्थायी रूप से कहीं और चले गए हैं या एक से अधिक बार पंजीकृत हैं। सरकारी स्कूल में पढ़ाने वाली शिक्षिका सुमोना इन मतदाताओं से व्यक्तिगत तौर पर परिचित हैं। 'संडे नवजीवन' से फोन पर बात करते हुए उन्होंने कहा, "जब मैं जनगणना के दौरान उनसे मिलने गई, तो वह घर पर थे। मैंने उनसे फॉर्म भरवाए और उनके हस्ताक्षर लिए नाम हटाने की सूची में मेरे प्रधानाध्यापक का नाम भी शामिल था, जिन्हें मैं प्रतिदिन रिपोर्ट करती हूं। इसमें मेरे छात्रों के माता-पिता भी थे, जिन्हें मैं व्यक्तिगत रूप से जानती हूं। मैं भला उन्हें सुनवाई के लिए कैसे बुला सकती थी? किस आधार पर? अगर वे मेरे खिलाफ एफआईआर दर्ज करा देते तो क्या होता?"

प्रशिक्षण सत्र में ऐसे हालात से दो-चार हुए चौधरी और चार अन्य बीएलओ ने अधिकारियों से साफ कह दिया कि उन्हें मतदाताओं को नोटिस भेजना और सुनवाई के लिए बुलाना जरूरी नहीं लगता, नाम हटाने की तो बात ही छोड़ दें। उन्होंने उठाई गई आपत्तियों को खारिज कर दिया क्योंकि उन्हें पता था कि सब फर्जी थीं।

'प्रक्रिया' का पालन करने से इनकार करना अधिकारियों को गंवारा नहीं हुआ। फर्जी फॉर्म 7 जमा करने वाले उनके बयान के सोशल मीडिया पर वायरल होते ही 123-करीमगंज उत्तर निर्वाचन क्षेत्र के निर्वाचन अधिकारी ने सभी पांचों को कारण बताओ नोटिस (दिनांक 22 जनवरी) जारी कर दिया।

उन पर मीडियाकर्मियों से अनधिकृत बातचीत करने और आपत्तियों और लिस्ट से हटाए जाने के संबंध में सार्वजनिक बयान देने का आरोप है। नोटिस में यह भी दावा है कि उनके सोशल मीडिया वीडियो में 'वास्तविक कानूनी और प्रक्रियात्मक स्थिति को सही और पूरी तरह से प्रतिबिंबित नहीं किया गया है, विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि दावों और आपत्तियों पर कानून के अनुसार सख्ती से कार्रवाई की जाती है और उचित सत्यापन और निर्धारित वैधानिक प्रक्रिया को पूरा किए बिना किसी भी मतदाता प्रविष्टि को हटाया या संशोधित नहीं किया जाता है'।

शेष पेज 2 पर ▸

घेटोकरण का गुजरात मॉडल अब राजस्थान में भी

जब प्रॉपर्टी बेचना अपराध बन जाए, तो समझ लीजिए कि आप मोदी के भारत में हैं

आकार पटेल

राजस्थान की भाजपा सरकार इस सप्ताह गुजरात के अलगाव वाले एक कानून की तर्ज पर ही एक कानून पास करने वाली है। इस बात की संभावना कम ही है कि ज्यादातर भारतीयों को इसके बारे में पता चलेगा क्योंकि मीडिया शायद ही इसके बारे में रिपोर्ट करेगा। आइए देखते हैं कि इसके पीछे क्या हासिल करने की मंशा है।

गरीब लोगों को एक साथ ऐसी जगह रहने के लिए मजबूर किया जाता है, जिसे हम झुग्गी-झोपड़ी कहते हैं। एक जातीय समूह को जबरदस्ती कुछ खास इलाकों में रहने के लिए मजबूर करना घेटो या बस्ती कहते हैं। गरीब लोगों के पास कहीं और जाने का कोई साधन नहीं होता। जातीय समूहों के पास साधन होने पर भी कोई विकल्प नहीं होता। रंगभेद का मतलब है अलगाव और यह दक्षिण अफ्रीका की उस नीति की याद दिलाता है जिसमें काले अफ्रीकियों को खास बस्तियों में रहने के लिए मजबूर किया जाता था। वे कानून के अनुसार केवल तय जगहों पर ही रह सकते थे।

अमेरिका में जब 1960 के दशक में कानूनी तौर पर रंगभेद खत्म हुआ, तो सरकार ने फेयर हाऊसिंग एक्ट जैसे कानून पास किए जिनका मकसद अलग-अलग नस्लों को एक साथ लाना था। इसके तहत संपत्ति या मकान आदि खरीदने और बेचने में होने वाले उस भेदभाव को रोका गया, जो नस्लों को अलग रख रहा था। पूरे गुजरात में, सभी बड़े शहरों और कई कस्बों में, भाजपा सरकार ने इसका उल्टा किया है। गुजरात अशांत क्षेत्र अधिनियम के तहत मुसलमानों को जानबूझकर घेटो या तय बस्तियों में रहने के लिए मजबूर किया जा रहा है। इस कानून के मुताबिक, शहरों के कुछ खास हिस्सों में नागरिकों को अपनी संपत्ति बेचने या किरायेदार बदलने से पहले सरकार से इजाज़त लेनी होती है और उन्हें धर्म के आधार पर जांचा-परखा जाता है। आवेदन में खरीदार और बेचने वाले का नाम होना चाहिए और इसमें एक हलफनामा भी शामिल होता है कि संपत्ति की बिक्री बिना किसी दबाव के और बाजार मूल्य पर हुई है।

यह कानून शुरू में कांग्रेस ने पास किया था, और 2009 में तत्कालीन मोदी सरकार ने इसमें बदलाव करके कलेक्टर या जिलाधिकारी को जांच करने और एक्ट के तहत संपत्ति पर कब्ज़ा करने के लिए विवेकाधीन शक्तियां दे दीं। जुलाई 2019 में इसमें एक और बदलाव किया गया। पहले, संपत्ति बेचने वालों को अपनी संपत्ति ट्रांसफर करने की इजाज़त के लिए आवेदन करना होता था और हलफनामा देकर अपनी सहमति रजिस्टर करनी होती थी। अब इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा कि बिक्री मर्ज़ी से हुई थी या नहीं, और मालिक को सही कीमत दी गई थी या नहीं। कलेक्टर अपनी मर्ज़ी से प्रॉपर्टी की बिक्री रोक सकता है, अगर उसे लगता है कि ट्रांसफर होने पर 'डेमोग्राफिक संतुलन में कोई गड़बड़ी' होगी या 'किसी समुदाय के लोगों का गलत तरीके से एक इलाके में इकट्ठा होना' होगा या 'ध्रुवीकरण की संभावना' होगी।

कलेक्टर इन आधारों पर जांच करने के बाद संपत्ति के कानूनी ट्रांसफर के लिए अर्जी को खारिज कर सकता है। बिना मंज़ूरी के प्रॉपर्टी ट्रांसफर करने पर सज़ा बढ़ाकर छह साल जेल कर दी गई (जब यह कानून पहली बार लागू हुआ था, तब यह छह महीने थी)। अब इस कानून ने राज्य सरकार को मोहल्लों में डेमोग्राफिक स्ट्रक्चर (जनसंख्या में हो रहे बदलाव) पर नज़र रखने के लिए एक 'मॉनिटरिंग और एडवाइज़री कमेटी' बनाने की भी इजाज़त दे दी है। यह कानून वर्तमान में राज्य के तीन सबसे बड़े शहरों, अहमदाबाद, वडोदरा और सूरत के बड़े हिस्सों में लागू है, और भरूच, कपडवंज, आनंद और गोधरा में भी इस्तेमाल होता है। ये वही जगहें हैं जहां गुजरात के मुसलमान ज्यादा रहते हैं, जिससे वे असल में हमेशा के लिए अलग-थलग पड़ गए हैं। इसका मतलब है कि विदेशी तो गुजरात में ऐसी प्रॉपर्टी किराये पर ले सकते हैं और खरीद सकते हैं जो भारतीय मुसलमान नहीं खरीद सकते।

पिछले सप्ताह राजस्थान मंत्रिमंडल ने भी एक ऐसे कानून को मंज़ूरी दी है जो गुजरात की तर्ज पर है। राजस्थान के कानून मंत्री जोगाराम पटेल ने कहा कि "गलत तरीके से बसी" कॉलोनियों पर नजर रखी जाएगी। इन इलाकों में सरकार की इजाज़त के बिना अचल संपत्तियों का ट्रांसफर अमान्य होगा। इस कानून को भी एक लुभावना नाम दिया गया है: राजस्थान अशांत क्षेत्रों में अचल संपत्ति के ट्रांसफर पर रोक और परिसर से किरायेदारों को बेदखल करने से सुरक्षा के प्रावधान विधेयक, 2026।

विभाजन अमीरों-गरीबों के बीच की खाई को उजागर करती राजस्थान की यह बस्ती

> यह समुदायों के बीच सामाजिक और व्यावसायिक लेन-देन को अपराध बनाता है, जैसा कि नाज़ी जर्मनी ने किया था। उल्लंघन गैर-जमानती और संज्ञेय हैं, और इसके लिए पांच साल तक की जेल की सजा हो सकती है

इसका असर बिल्कुल वैसा ही होगा जैसा हमने गुजरात में देखा है। ठीक नाज़ी जर्मनी की तरह यह समुदायों के बीच सामाजिक और कारोबारी या कमर्शियल लेन-देन को गैर-कानूनी बनाता है। राजस्थान कानून के प्रावधानों का उल्लंघन गैर-जमानती और संज्ञेय अपराध है, और इसके लिए पांच साल तक की जेल और जुर्माना हो सकता है। प्रॉपर्टी किराये पर देने पर आपको जेल हो सकती है। राज्य में कांग्रेस इस कानून का विरोध कर रही है, लेकिन उसके पास जरूरी संख्या नहीं है और वह इसे रोक नहीं पाएगी। कांग्रेस प्रदेश अध्यक्ष ने कहा है कि "डेमोग्राफिक असंतुलन कोई कानूनी शब्द नहीं है। इस बात का कोई ज़िक्र नहीं है कि किस आधार पर किसी इलाके को डिस्टर्बड घोषित किया जाएगा। भाजपा गुजरात मॉडल को फॉलो करके सत्ता में बने रहना चाहती है।" यह सच है कि मोदी के नेतृत्व में भारत ने कई ऐसे कानूनों के जरिये संविधान के धर्मनिरपेक्ष चरित्र को खोखला कर दिया है, जिनका कोई तीखा विरोध भी नहीं हुआ। अदालतों ने भी इससे मुंह फेरे रखा, विपक्ष बहुत कमजोर है और मीडिया तो आंखें मूंदे ही है।

बीफ रखने को अपराध बनाना 2015 में शुरू किया गया था, जिसकी शुरुआत महाराष्ट्र और हरियाणा से हुई। अलग-अलग धर्मों में शादी को अपराध बनाना 2018 में शुरू हुआ, जिसकी शुरुआत उत्तराखंड से हुई। मुस्लिम तलाक को अपराध बनाना 2019 में हुआ, और साथ ही उन्हें नागरिकता संशोधन अधिनियम से खास तौर पर बाहर रखा गया। राजस्थान का कानून इस सिलसिले को आगे बढ़ाता है।

कदम दर कदम, एक के बाद एक कानून से, हम एक ऐसे न्यू इंडिया में पहुंच चुके हैं, जो एक बहुसंख्यकवादी राज्य है और धर्मनिरपेक्षता का अपना खोल उतार रहा है। ■

फॉर्म 7 वोटर निपटाने का..

पेज एक का शेष

चौंकाने वाली बात यह है कि सभी 133 फॉर्म सलीम अहमद के नाम और ईपीआईसी नंबर से जमा किए गए थे, जिन्हें अपने नाम से दर्ज आपत्तियों के बारे में कैसी भी जानकारी नहीं थी। अहमद ने संडे नवजीवन से कहा, "मैं बेरोजगार हूं और इस सब के बारे में कुछ नहीं जानता। मुझे बीएलओ और अन्य लोगों से पता चला कि मेरे नाम और ईपीआईसी नंबर का इस्तेमाल मतदाताओं के नाम हटाने के लिए किया गया था।" उन्होंने व्यंग्य भरे लहजे में आगे कहा, "इन 133 नामों में मेरा नाम भी मृत मतदाता के रूप में शामिल है।"

अहमद ने श्रीभूमि जिले के उपायुक्त के समक्ष एक हलफनामा दायर कर सामूहिक रूप से नाम हटाने के लिए अपने नाम के दुरुपयोग पर आपत्ति भी जताई है।

*

तृणमूल कांग्रेस की राज्यसभा सदस्य और राष्ट्रीय प्रवक्ता सुष्मिता देव पूछती हैं, "अगर हिमंता बिस्वा सरमा को चुनाव जीतने का इतना ही भरोसा है, तो उन्हें फर्जी आपत्तियों के जरिये मुस्लिम मतदाताओं को हटाने की जरूरत क्यों पड़ रही है?" उन्होंने आगे कहा, "परिसीमन और मुसलमानों को बेदखल करके मुस्लिम मतदाताओं को 22 निर्वाचन क्षेत्रों में सीमित करने का काम तो वह पहले ही कर चुके हैं। उन्हें पता है कि वे इन सीटों पर जीत नहीं सकते, लेकिन उन्हें तो सिर्फ राज्य को सांप्रदायिक आधार पर बांटने की पड़ी है!

तो क्या असम में भ्रष्टाचार और खराब प्रदर्शन के आरोपों से जूझ रही भाजपा आगामी विधानसभा चुनावों में जीत हासिल करने के लिए 'फर्जी' मतदाता सूचियों के भरोसे है? आनायास तो नहीं होगा कि असम में मतदाता सूचियों का मसौदा 27 दिसंबर को प्रकाशित हुआ, और उसके बाद फॉर्म 7 के माध्यम से आपत्तियों की बाढ़ आ गई। गड़बड़ी की आशंका को और पुख्ता करने वाली एक और याचिका बोरखोला निर्वाचन क्षेत्र के 22 निवासियों (सभी मुस्लिम) द्वारा मोहन लाल दास के खिलाफ एफआईआर दर्ज करने की मांग के साथ दायर हुई है। कछार के वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक को संबोधित याचिका में दास पर धोखाधड़ी से आपत्तियां दर्ज करने और झूठा दावा करने का आरोप लगाया गया है कि उन्होंने मतदाता सूची से उनके नाम हटाने का अनुरोध किया था।

23 जनवरी को मुख्य चुनाव आयुक्त को लिखे पत्र में सुष्मिता देव ने कई निर्वाचन क्षेत्रों में दर्ज की गई आपत्तियों की असामान्य रूप से अधिक संख्या की ओर ध्यान दिलायाः 118-सिलचर एलएसी में लगभग 15,304, 116-कटीगोराह में 9,671, 50-मंगलदोई में 8,602, 30-झाजो-सुआलकुची में 10,151 और 38-बरखेतरी में 10,249। देव ने लिखा, 'प्रत्येक मतदाता को नोटिस देना और 11 दिनों के भीतर सुनवाई करना एक असंभव कार्य है, जिसके कारण वास्तविक मतदाता प्रभावी सुनवाई से वंचित रह जाएंगे और अंततः उनके लोकतांत्रिक अधिकार का हनन होगा।'

सौरभ सेन कोलकाता स्थित एक स्वतंत्र लेखक हैं

"क्रिकेट के मैदान पर सियासत को आने दिया तो किसी की जीत नहीं होगी"

क्या क्रिकेट की विश्व प्रशासकीय बॉडी आईसीसी (इंटरनेशनल क्रिकेट काउंसिल) एक इवेंट मैनेजर बनकर रह गई है? यह ऐसा सवाल है जो माहौल और बिगाड़ रहा है। खासकर टी-20 वर्ल्ड कप 2026 से पहले की अनिश्चितताओं और भ्रम को देखते हुए यही कहा जा सकता है और यह बात एहसान मनी को बहुत अखरती है।

एहसान मनी अब 80 साल के हो चुके हैं। पाकिस्तान के इस शालीन चार्टर्ड अकाउंटेंट ने अपने सबसे अच्छे साल एक ऐसे क्रिकेटिंग इकोसिस्टम का हिस्सा बनकर बिताए, जहां भारतीय उपमहाद्वीप के बड़े देश अपनी बात मनवाने के लिए मिलकर काम करने में यकीन करते थे।

मनी 2003 से 2006 के बीच आईसीसी के चेयरमैन थे। इसी दौरान इसका हेडक्वार्टर दुबई शिफ्ट हुआ। इसके बाद 1996 से 2002 के बीच वह इसकी फाइनेंस एंड कमर्शियल अफेयर्स कमेटी के चेयरमैन थे। 1989 से 1996 तक और फिर तत्कालीन प्रधानमंत्री इमरान खान की इच्छा के मुताबिक एहसान 2018 से 2021 के बीच पाकिस्तान क्रिकेट बोर्ड (पीसीबी) के मुखिया रहे। इस दौरान वह आईसीसी बोर्डरूम में एक प्रभावशाली आवाज रहे।

अभी पिछले साल आईसीसी चैंपियंस ट्रॉफी वाला हाल हो रहा है। बांग्लादेश एक बार फिर विवादों के घेरे में है। उसका आरोप है कि भारत का खास ध्यान रखा जा रहा है। जब भारत ने 'खतरे की आशंका' का हवाला देते हुए मेजबान देश पाकिस्तान में खेलने से मना कर दिया, तो उसे अपने सभी मैच दुबई में खेलने की इजाजत दे दी गई, जबकि दूसरी टीमों को पाकिस्तान और यूएई के बीच आना-जाना पड़ेगा। जब मुस्तफिजुर रहमान विवाद के बाद बांग्लादेश ने अपनी बात रखी, तो आईसीसी टस-से-मस नहीं हुई और उसे टूर्नामेंट से बाहर कर दिया।

अभी बांग्लादेश अपने रुख पर अड़ा हुआ है और पाकिस्तान आईसीसी को इंतजार करवा रहा है। ऐसे में क्रिकेट के 'पावर कॉरिडोर' में उथल-पुथल के माहौल के तब तक बने रहने की संभावना है, जब तक आभासी रूप में ही सही, आईसीसी के सदस्य देशों के साथ एक जैसा व्यवहार नहीं होता है। 1980 के दशक में क्षेत्रीय आवाज को मजबूत करने के लिए बनी एशियन क्रिकेट काउंसिल (एसीसी), जिसमें भारत बड़े भाई की भूमिका निभाता था, अब अपने मुख्य स्टेकहोल्डर को बेमेल पा रही है। दुबई में हुए पिछले एशिया कप ने इस दरार को साफ कर दिया था।

आईसीसी इंग्लैंड और ऑस्ट्रेलिया की वीटो पावर के दौर से आगे बढ़ गई है और अब जो बोर्ड है, वह भारत के खिलाफ बोलने से बहुत डरता है। ऐसे में आईसीसी को अपनी विश्वसनीयता बहाल करने के लिए क्या करना होगा, इसपर **एहसान मनी** से **गौतम भट्टाचार्य** के साथ लंबी बातचीत के कुछ अंश:

आईसीसी पर भारत का पक्ष लेने के आरोप लग रहे हैं?क्या आपको लगता है कि टी-20 वर्ल्ड कप की मुश्किल तैयारियों ने आईसीसी की तंद्रा तोड़ने का काम किया है?

हां। यह निश्चित ही आईसीसी बोर्ड में फैसला लेने वालों पर भारत की पकड़ को दिखाता है। लिहाजा, एक गंभीर प्रशासकीय समीक्षा की जरूरत है, क्योंकि सभी सदस्य खेल के बजाय अपने हितों के बारे में सोच रहे हैं। चेयरमैन, जय शाह, एक मुश्किल और बेहद उलझे हुए हालात में हैं। मुझे लगता है कि निष्पक्षता और ज्यादा पारदर्शिता के लिए, ज्यादा स्वतंत्र निदेशकों की जरूरत है।

इसके लिए संविधान में बदलाव करना होगा, जो आसान नहीं। क्या आपको लगता है कि अगर ज्यादा ताकतवर बोर्ड आवाज उठाए तो कोई फर्क पड़ सकता है?

मौजूदा हालात के सबसे बड़े गुनहगार इंग्लैंड और ऑस्ट्रेलिया हैं, जो भारत को नाराज करने से डरते हैं, क्योंकि इससे उन्हें कमाई का बहुत बड़ा नुकसान होगा। इंग्लैंड और भारत के बीच पिछली टेस्ट सीरीज हाल के समय की सबसे अच्छी चंद सीरीज में से एक थी- सभी मैचों में खासी भीड़ उमड़ी। इसमें संदेह नहीं कि इंग्लैंड और ऑस्ट्रेलिया अपनी बात कहने की स्थिति में हैं, लेकिन चूंकि भारत के नियमित नहीं खेलने से उन्हें नुकसान होगा, दोनों देशों के बोर्ड मामले को बिगाड़ने नहीं चाहते।

आपने सालों आईसीसी का फाइनेंस संभाला। सदस्य देशों के बीच फंड के तथाकथित असमान बंटवारे के बारे में आपका क्या मानना है?

यह शिकायत सही है क्योंकि पैसा वहीं जाना चाहिए जहां इसकी सबसे ज्यादा जरूरत है। वेस्ट इंडीज जैसे देश को, जिसमें इतने सारे टापू हैं, या साउथ अफ्रीका को थोड़ी-थोड़ी रकम देने का क्या मतलब है? न्यूजीलैंड फिर भी मैनेज कर सकता है क्योंकि वहां की आबादी कम है। वहीं, अफगानिस्तान और आयरलैंड जैसे नए पूर्ण सदस्य देशों को तो इतना भी पैसा नहीं मिलता कि वे अपने क्रिकेटरों को फुलटाइम प्रोफेशनल स्टेटस दे सकें।

हमारे समय में, (जगमोहन) डालमिया और मैंने जोर दिया था कि हर देश को हर चार साल में एक-दूसरे के साथ खेलना चाहिए- अब ऐसा नहीं होता। सिर्फ टॉप टीमें ही आपस में पूरी पांच-टेस्ट सीरीज खेलती हैं। कोई क्रिकेट की परवाह नहीं कर रहा, सब बस अपना फायदा देख रहे हैं।

बांग्लादेश के पीछे हटने के फैसले पर वापस आते हैं, क्या आपको लगता है कि उनके पास मजबूत वजह थी?

आईसीसी को यह नौबत नहीं आने देनी चाहिए थी। इसीलिए मैं कहता हूं कि प्रशासकीय समीक्षा बहुत जरूरी है। बीसीसीआई को, कम-से-कम, नीलामी में खिलाड़ी (मुस्तफिजुर रहमान) को चुनने के बाद आईपीएल से नहीं हटाना चाहिए था। जब भारत एक खिलाड़ी की सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकता, तो बांग्लादेश के लिए अपनी टीम की सुरक्षा का सवाल उठाना वाजिब था।

हालांकि, मुझे लगता है कि उन्होंने एक टैक्टिकल गलती की है – बांग्लादेश को भारत जाने से रोकने के लिए सरकार को आगे आना चाहिए था, न कि बांग्लादेश क्रिकेट बोर्ड (बीसीबी) को। याद है, भारत ने भी ऐसा ही किया था जब उन्होंने आईसीसी चैंपियंस ट्रॉफी के लिए पाकिस्तान जाने से मना कर दिया था। पाकिस्तान ने भी उन्हीं नियमों को लागू करने पर जोर दिया, और हाइब्रिड मॉडल को मान लिया गया।

हाइब्रिड मॉडल ने बेशक 2027 तक भारत-पाकिस्तान मैचों के लिए वेन्यू चुनने का संकट खत्म कर दिया, लेकिन क्या आपको लगता है कि यह पक्का समाधान है?

मेरे हिसाब से तो यह गलत समाधान है। क्रिकेट को आईओसी या फीफा के मॉडल को अपनाना चाहिए। मेजबान देश को वीजा जारी करने और खिलाड़ियों और अधिकारियों की सुरक्षा और हिफाजत पक्का करने की स्थिति में होना चाहिए, नहीं तो मेजबानी का अधिकार छीन लिया जाना चाहिए।

भारत और पाकिस्तान के बीच कई बार झड़पें हुईं। याद है, कारगिल 1999 में हुआ था। करीब पांच साल का ऐसा समय था जब दोनों देशों ने द्विपक्षीय सीरीज नहीं खेली। मैंने भारत सरकार से बात की और हमने 2004 में भारत की मेजबानी की। वह एक शानदार सीरीज थी। हमारे समय में, चाहे सर क्लाइड वॉलकॉट हों, डालमिया हों या खुद मैं, हमने प्रशासन में राजनीति को नहीं घुसने दिया।

पिछले 15 सालों से बड़े आईसीसी टूर्नामेंट्स में भारत और पाकिस्तान को एक ही ग्रुप में रखने की आईसीसी की चाल शायद पैसे कमाने का जरिया हो, लेकिन क्या इससे दूसरे मैचों का महत्व कम नहीं होता? अब तो एसीसी भी यही करती है...

सच है। जब मैं पीसीबी चेयरमैन था, तो मैंने आईसीसी से इस बारे में पूछा, तो मुझे अक्सर यही जवाब मिला कि यह ब्रॉडकास्टर्स की रिक्वेस्ट थी। मैंने उनसे कहा कि इसके लिए उन्हें हमारी इजाजत चाहिए। अगर पाकिस्तान के बराबर स्टेकहोल्डर होने के बावजूद भारत रेवेन्यू का बड़ा हिस्सा ले रहा है, तो इसमें हमारा क्या फायदा? रमीज (राजा), जिन्होंने पीसीबी में मेरी जगह ली, उन्होंने इस बात को आगे नहीं बढ़ाया।

अगर सब ठीक रहा, तो भारत और पाकिस्तान 15 फरवरी को कोलंबो में ग्रुप-सी के मैच में एक-दूसरे के सामने होंगे। क्या आपको एशिया कप वाले हाथ मिलाने के विवाद के दोबारा होने की आशंका है?

दुनिया भर के क्रिकेटरों में आपस में भाईचारा है और वे एक-दूसरे की इज्जत करते हैं। विराट कोहली को पाकिस्तान के खिलाड़ियों के बीच जो तारीफ मिलती है, वह कोई छिपी बात नहीं। तेज गेंदबाज मोहम्मद आमिर को बैट गिफ्ट करने की उनकी कहानी मशहूर है।

असलियत यह है कि (भारत और पाकिस्तान के बीच) राजनीति तो होगी, लेकिन इसे क्रिकेट के मैदान पर लाने से किसी का फायदा नहीं होता। इसी वजह से मुझे गौतम गंभीर का अपने खिलाड़ियों के रुख को सही ठहराना गलत लगा। इस तरह की चीजें नहीं होनी चाहिए। ■

बदली जमीनी हकीकत को समझना होगा

भारत ने जो जैसे को तैसा वाला रुख अपना रखा है, वह एक खराब रणनीति है और उससे भी खराब कूटनीति

श्रीराधा दत्ता

यह कहना कि भारत और बांग्लादेश के रिश्ते तनावपूर्ण हैं, हालात को बहुत हल्के में आंकना होगा। किसी एक पक्ष को दोष देना मुश्किल है, लेकिन ऐसा लगता है कि दोनों ही पक्ष एक-दूसरे से दूरी बनाने पर बिल्कुल आमादा हैं।

कनेक्टिविटी कॉरिडोर, जिसे भारत और बांग्लादेश ने कड़ी मशक्कत के बाद तैयार किया, अब इस्तेमाल में नहीं है। दोनों देशों द्वारा टूरिस्ट वीजा और कई व्यापार सुविधाओं को वापस लेने से द्विपक्षीय व्यापार में भारी गिरावट आई है, जबकि 2021-22 में यह 18 अरब अमेरिकी डॉलर के स्तर तक पहुंच गया था।

भारत ने 2020 के उस करार को रद्द कर दिया है, जिसके तहत बांग्लादेश को किसी तीसरे देश को सामान भेजने के लिए भारतीय लैंड कस्टम स्टेशन, बंदरगाहों और हवाई अड्डों के इस्तेमाल की इजाजत थी। मई 2025 में, भारत ने पूर्वोत्तर में लैंड ट्रांजिट पोस्ट के जरिये बांग्लादेश से रेडीमेड कपड़ों की एंट्री रोक दी। इसके बाद जून 2025 में जूट और उससे जुड़े उत्पादों के आयात पर रोक लगा दी गई - अब इन्हें भारत में सिर्फ नवी मुंबई के न्हावा शेवा बंदरगाह के जरिये लाया जा सकता है। भारत द्वारा जमीनी रास्तों पर बैन लगाने के जवाब में, पाकिस्तान ने तुरंत बांग्लादेश को अपने कराची बंदरगाह का इस्तेमाल करने की पेशकश की। बांग्लादेश द्वारा पाकिस्तानी फाइटर जेट खरीदने और ढाका और कराची के बीच सीधी उड़ानों को फिर शुरू करने की भी बात चल रही है। हालांकि, शेख हसीना ने 'भारत विरोधी गतिविधि' की इजाजत नहीं दी थी, लेकिन अंतरिम सरकार ऐसा कोई दबाव महसूस नहीं कर रही। इसके अलावा, बांग्लादेश द्वारा चीन को डुआर्स इलाके में भारत की संवेदनशील सीमा के पास इंफ्रास्ट्रक्चर बनाने के लिए बुलाने (तीस्ता मास्टरप्लान) से भी भारत खफा है।

ऐसा लगता है कि दोनों देश यह पक्का करने पर दिन-रात काम कर रहे हैं कि आपसी रिश्ते रसातल में ही रहें। बांग्लादेश तब नाराज हुआ जब भारत ने प्रोफेसर यूनुस के भारत के साथ द्विपक्षीय बैठक के अनुरोध को नजरअंदाज कर दिया। इसके बदले में बांग्लादेश के मुख्य सलाहकार की चीन यात्रा और वहां दिए गए उनके सार्वजनिक बयान भारत को नागवार गुजरे। जुलाई 2025 में, जब बांग्लादेश वायुसेना का एक लड़ाकू विमान ढाका के दियाबारी इलाके में एक स्कूल में गिर गया, जिसमें 27 लोग मारे गए और 170 से ज्यादा घायल हो गए, तो बांग्लादेश ने भारत से मेडिकल मदद मांगी। दिल्ली से बर्न स्पेशलिस्ट की टीम गई, लेकिन शुरू में उन्हें मरीजों के इलाज की इजाजत नहीं थी, वे मरीजों को सिर्फ देख सकते थे।

जैसे ही भारतीय विदेशमंत्री की पूर्व प्रधानमंत्री खालिदा जिया के अंतिम संस्कार में मौजूदगी से अच्छे संकेत गए, वैसे ही इंडियन प्रीमियर लीग की एक टीम (कोलकाता नाइट राइडर्स) से बांग्लादेशी क्रिकेटर मुस्तफिजुर रहमान को हटाने का गलत सलाह वाला और गलत समय पर दिया गया फरमान आ गया। बांग्लादेश क्रिकेट बोर्ड की सुरक्षा चिंताओं और आईसीसी टी-20 विश्व कप में खेलने से इनकार करने की घटना उसी दौरान हुई जब भारत ने ऐसी ही सुरक्षा चिंताओं का हवाला देते हुए बांग्लादेश को राजनयिकों के लिए 'नॉन-फैमिली पोस्टिंग' वाला देश घोषित कर दिया।

'अवैध बांग्लादेशियों' के बारे में भारत की बढ़ती तीखी बयानबाजी - जिसे पश्चिम बंगाल और असम जैसे बांग्लादेश से सटे राज्यों में काफी समर्थन मिला है - और बांग्लादेश में हिन्दुओं पर हो रहे अत्याचारों के बारे में मुख्यधारा के भारतीय मीडिया में बढ़ा-चढ़ाकर किए गए दावों ने भी माहौल को गरमाए रखा है।

संबोधन भारत में टी20 वर्ल्ड कप में भागीदारी को लेकर संवाददाताओं को संबोधित करते बांग्लादेश सरकार के खेल सलाहकार आसिफ नजरुल

शेख हसीना 5 अगस्त 2024 को बांग्लादेश से भागने के लिए मजबूर हुईं और जब भारत ने उन्हें शरण दी, तो भार-बांग्लादेश के रिश्तों में खासा तनाव अनुमानित था। भारत विरोधी गुस्से का उबाल, भारतीय उच्चायोग पर हमले और दोनों तरफ सोशल मीडिया कैंपेन ने इस दरार को और बढ़ा दिया। पड़ोस में अपने सबसे करीबी सहयोगी को खोने के सदमे ने भारत के बांग्लादेश को देखने के तरीके को बदल दिया। अल्पसंख्यकों पर बार-बार हमले, सड़कों पर भीड़ और अवामी लीग की राजनीतिक गतिविधियों पर बैन लगाने से अविश्वास और गहरा हो गया। अंतरिम सरकार द्वारा जमात-ए-इस्लामी से बैन हटाने और हिंसक इस्लामी तत्वों को नजरअंदाज करने की प्रवृत्ति ने भी दुश्मनी को बढ़ाया। 'वॉशिंगटन पोस्ट' की रिपोर्ट के मुताबिक ढाका में एक अमेरिकी राजनयिक और पत्रकारों के बीच बातचीत का हालिया लीक ऑडियो, पहले से ही अस्थिर माहौल में एक और मोड़ लेकर आया, क्योंकि इससे यह संकेत मिला कि अमेरिका जमात के प्रति नरम हो रहा है। बांग्लादेश में छात्र और युवा हमेशा से हसीना के भारत समर्थक झुकाव को नापसंद करते रहे हैं। वे भारत को दोहरे मापदंड वाला दादा मानने के अपने विचार को व्यक्त करने में ज्यादा मुखर हो गए हैं।

> पड़ोस में अपने सबसे करीबी सहयोगी को खोने के सदमे ने भारत के बांग्लादेश को देखने के तरीके को बदल दिया। अल्पसंख्यकों पर बार-बार हमले, सड़कों पर भीड़ और अवामी लीग की राजनीतिक गतिविधियों पर बैन लगाने से अविश्वास और गहरा हो गया

नई दिल्ली में इन दिनों एक मजाक चल रहा है जो बताता है कि भारत किस मुश्किल में फंसा हुआ है। कूटनीतिक हलकों में मजाक चल रहा है कि अवामी लीग को भारत में एक राजनीतिक दल के तौर पर मान्यता मिलने वाली है। आखिर, बड़ी संख्या में पूर्व मंत्रियों और अवामी लीग के वरिष्ठ नेताओं ने भारत में शरण जो ले रखी है। वे भारत सरकार की जानकारी, या शायद सहमति के बिना ऐसा नहीं कर पाते। बांग्लादेश में 12 फरवरी के चुनावों के लिए अभियान तेज होने के साथ ही, भारत में अवामी लीग के नेताओं द्वारा की जा रही प्रेस कॉन्फ्रेंस की संख्या को देखते हुए, यह मजाक जितना हम सोचते हैं, उससे कहीं ज्यादा सच हो सकता है।

भारत से शेख हसीना की गतिविधियों ने रिश्तों को और जटिल बना दिया है। बांग्लादेश इससे खफा है कि उन्हें ऑनलाइन प्रेस कॉन्फ्रेंस करने और बांग्लादेश में राजनीतिक घटनाओं पर खुलकर टिप्पणी करने की इजाजत दी जा रही है। अंतरिम सरकार ने उन्हें वापस भेजने का अनुरोध करते हुए एक नोट भेजा था, जिसका जवाब देना भारत ने जरूरी नहीं समझा। विडंबना देखिए, शेख हसीना ने बांग्लादेश के जिस इंटरनेशनल क्रिमिनल ट्रिब्यूनल को स्थापित किया, उसने ही उन्हें 'मानवता के खिलाफ अपराधों' का दोषी करार देते हुए मौत की सजा सुनाई। इससे इतना तो जरूर हुआ कि शेख हसीना को वापस भेजने की मांग फिर से तेज हो गई। इस मुद्दे पर भारत की चुप्पी ने बांग्लादेश में भारत विरोधी भावना को और भड़का दिया और सोशल मीडिया पर इसे और हवा मिली। बांग्लादेश में यह आम धारणा है कि भारत हसीना सरकार का समर्थक है और नई दिल्ली ने जिस तरह बांग्लादेश की मुख्य चिंताओंः पानी बंटवारे और सीमा पर होने वाली हत्याओं पर ध्यान नहीं दिया है, उससे ऐसे विचारों को मजबूती मिली है। लेकिन जल्द ही भारत को इस बारे में साफ रुख अपनाना होगा कि वह शेख हसीना और भारत में निर्वासित अवामी नेताओं को कितनी आजादी दे सकता है।

बांग्लादेश में होने वाले चुनावों में अवामी लीग पर हिस्सा लेने पर रोक के बावजूद, उसका असर बहुत ज्यादा है। नतीजा काफी हद तक इस बात पर निर्भर करेगा कि बदलते चुनावी समीकरण में समर्थक किस तरफ झुकते हैं। भारत द्वारा शेख हसीना को अपने समर्थकों को संबोधित करने और भारत से अपनी चिंताओं को जाहिर करने की अनुमति देने से यह धारणा और मजबूत हुई है कि भारत चुनाव में दखल दे रहा है।

सुनहरे दिन निस्संदेह खत्म हो गए हैं। ढाका और दिल्ली दोनों को यह याद रखना चाहिए कि जमीनी हकीकत बदल गई है। भारत सुरक्षा खतरों को बर्दाश्त नहीं करेगा, चाहे वे असली हों या काल्पनिक, और बाहरी ताकतों के साथ बांग्लादेश की भागीदारी से भारत की परेशानी बढ़ेगी।

कड़वी सच्चाई यह है कि कोई भी देश दूसरे के बिना तरक्की नहीं कर सकता। बांग्लादेश को यह समझना चाहिए कि भारत उसे जितना कुछ देता है, कोई भी आसानी से उसकी जगह नहीं ले सकता। भारत को भी यह समझना चाहिए कि जैसे को तैसा वाली कार्रवाई खराब रणनीति और उससे भी खराब कूटनीति है, और दिल्ली और ढाका दोनों के हित में है कि वे अपने रिश्तों को फिर से ठीक करें। ■

श्रीराधा दत्ता जिंदल स्कूल ऑफ इंटरनेशनल अफेयर्स, ओ.पी. जिंदल ग्लोबल यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर और आईएसएएस-एनयूएस, सिंगापुर में नॉन-रेजिडेंट सीनियर फेलो हैं।

प्रकाशकः **पवन कुमार बंसल**; संपादकः **राजेश झा**; **पवन कुमार बंसल द्वारा दि एसोसिएटेड जर्नल्स लिमिटेड,** हेराल्ड हाउस, 5-ए, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली- 11002 की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रित। दि एसोसिएटेड जर्नल्स लिमिटेड, हेराल्ड हाउस, 5-ए, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 और द्वारा आर. सी. मल्होत्रा, दि इंडियन एक्सप्रेस (प्रा.) लिमिटेड प्रेस, ए-8, सेक्टर-7, नोएडा- 201301, उत्तर प्रदेश से मुद्रित।

रोकथाम ही बन गई व्यवस्थात्मक धोखाधड़ी

सुचेता दलाल

डेढ़ दशक पहले, कैग की रिपोर्ट में टेलीकॉम स्पेक्ट्रम और कोयला ब्लॉकों की बिक्री में भारी 'अनुमानित' नुकसान का दावा किया गया। इसने भ्रष्टाचार के खिलाफ देशव्यापी आंदोलन शुरू किया और यूपीए सरकार को सत्ता से बाहर कर दिया। आज स्थिति यह है कि दिसंबर 2025 से कैग की ऐसी कई चौंकाने वाली रिपोर्टों पर सन्नाटा छाया हुआ है जो प्रमुख कल्याणकारी योजनाओं में व्यवस्थात्मक धोखाधड़ी का खुलासा करती हैं।

पिछले कुछ हफ्तों में कैग की रिपोर्टों ने जीएसटी कलेक्शन, डीबीटी, स्किल डेवलपमेंट स्कीम, हाउसिंग प्रोग्राम और हेल्थकेयर डिलीवरी में हजारों करोड़ रुपये की धोखाधड़ी/गड़बड़ी का खुलासा किया है। फिर भी, अब ये राष्ट्रीय चेतना को नहीं जगाते। कारण?

डिजिटल मृगतृष्णा

सत्तारूढ़ सरकार ने बार-बार दावा किया है कि डीबीटी और 'डिजिटल इंडिया' गेम-चेंजर हैं, जिसने 34 लाख करोड़ सीधे लाभार्थियों तक पहुंचाने में मदद की और 2.7 लाख करोड़ 'बचाए'। मंत्री लगातार पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी के 1985 के उस बयान को दोहराते हैं कि रुपये में सिर्फ 15 पैसे जरूरतमंदों तक पहुंचते हैं, और इसकी तुलना बेहतर डिलीवरी से करते हैं। लेकिन हालिया कैग ऑडिट से पता चलता है कि डिजिटल सिस्टम ने समस्या का हल नहीं किया; और न वे इसे अब और छिपा सकते हैं।

18 दिसंबर 2025 को, कैग संजय मूर्ति ने चेतावनी दी कि अनिवार्य जांच के बिना डीबीटी के जरिये हजारों करोड़ का लेन-देन हो रहा है। 2023 में हजारों मृत लाभार्थियों को पेंशन देने की बात सामने आई। यह बताता है कि बहुप्रचारित डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर की उपलब्धता के बावजूद सिस्टम में कमियां हैं।

2025 के अंत और 2026 में पेश कैग रिपोर्ट - जो ज्यादातर 2023 में समाप्त अवधि के लिए थीं - दिखाती हैं कि डिजिटल सिस्टम अमूमन धोखाधड़ी रोकने के बजाय उसे बढ़ावा दे रहे हैं। ऑडिट में 'घोस्ट पेमेंट', गड़बड़ियां, डेटा फ्रॉड, गलत लाभार्थियों को पेमेंट, इस्तेमाल न किए गए फंड और कुप्रबंधन की बात सामने आई है, जिससे हजारों करोड़ रुपये बर्बाद हो गए, जबकि सबसे गरीब भारतीयों को कल्याण, घर और स्वास्थ्य सेवा से वंचित रखा गया।

आरबीआई के डिपॉजिटर एजुकेशन एंड अवेयरनेस फंड के सिर्फ 250 खातों की हमारी अपनी जांच से पता चलता है कि कल्याण फंड एक दशक तक निष्क्रिय रहने के बाद इसमें ट्रांसफर किए गए (इसमें 1.5 लाख करोड़ से ज्यादा के सरकारी, कल्याणकारी, धर्मार्थ फंड बिना दावे के पड़े हैं)।

हैरानी है कि टैक्स कलेक्शन के लिए बनाए गए एडवांस्ड, ऑटोमेटेड सिस्टम भी खराब निकले। 11 दिसंबर 2025 को, कैग ऑडिट में जीएसटी कलेक्शन में 21,695 करोड़ की गड़बड़ी सामने आई। रिपोर्ट में इनपुट टैक्स क्रेडिट में गड़बड़ी, 2,519 से ज्यादा मामलों में नियमों का पालन न करना और टैक्स और इंटरेस्ट का कम पेमेंट का खुलासा होता है। अगर देश का मुख्य रेवेन्यू इंजन लीक कर रहा है, तो हैरानी नहीं कि सोशल वेलफेयर स्कीमों में और भी बड़े-बड़े छेद हैं?

कौशल का भ्रम

यह गड़बड़ी स्वास्थ्य और कौशल विकास तक फैली हुई है। दिसंबर 2025 में पेश की गई प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना की ऑडिट रिपोर्ट से पता चला कि 2015 और 2022 के बीच, 94 प्रतिशत से ज्यादा लाभार्थियों यानी 90 लाख लोगों के बैंक विवरण नदारद, फर्जी या गलत थे। बैंक खातों के लिए '123456' जैसे प्लेसहोल्डर इस्तेमाल किए गए थे, जिससे पता चलता है कि ट्रेनी की पहचान और पेमेंट की सच्चाई पर भरोसा नहीं किया जा सकता। हजारों नाबालिग और अयोग्य लोगों को सर्टिफाइड किया गया और ट्रेनिंग पार्टनर की ओर से 31 फरवरी को ट्रेनिंग देने जैसे झूठे दावे किए गए। हिमाचल में एससी/एसटी छात्रों के लिए 1,024 करोड़ रुपये से ज्यादा केन्द्रीय फंड 'नियमों का पालन न होने' से इस्तेमाल नहीं हो पाया। इससे उन छात्रों में पढ़ाई छोड़ने वालों की तादाद बढ़ गई जिन्हें मदद की सबसे ज्यादा जरूरत थी।

चिंताजनक प्रमुख कल्याणकारी योजनाओं में व्यवस्थात्मक धोखाधड़ी का खुलासा करने वाली कैग की हालिया रिपोर्ट पर सन्नाटा चौंकाने वाला है

आवास योजना में धांधली

हाउसिंग सेक्टर का हाल भी वैसा ही है। उत्तर प्रदेश में प्रधानमंत्री आवास योजना के हालिया कैग ऑडिट में बड़े पैमाने पर कमियां सामने आईं। हजारों घर जिन्हें 'पूरा' बताया गया, वे खराब क्वालिटी के पाए गए या उनमें जरूरी टॉयलेट, बिजली और पानी की सुविधा नहीं थी। इसमें साइबर फ्रॉड का भी पता चला, जिसमें 159 लाभार्थियों के लिए तय 86.20 लाख रुपये अनधिकृत बैंक खातों में ट्रांसफर कर दिए गए।

छत्तीसगढ़ में, हाउसिंग लाभ उन्हें दिए गए जिनकी आय तय सीमा से ज्यादा थी, जबकि जियो-टैगिंग और सोशल ऑडिट की समस्याओं से 230 करोड़ रुपये से ज्यादा की रकम अटकी रही। फंड ट्रांसफर में देरी, लाभार्थियों की वेरिफिकेशन न होने और पेमेंट से जुड़ी समस्याओं के कारण पैसा फंसा रहा और लाभार्थियों को पेमेंट नहीं मिला।

> कैग के नतीजों पर लोगों की प्रतिक्रिया का न होना दिखाता है कि हमने भ्रष्टाचार और असफलता को सामान्य मान लिया है। या नागरिकों को शायद ही पता है कि हर केन्द्रीय बजट में गरीबी कम करने के लिए आवंटित बड़ी रकम का कोई फायदा नहीं हो रहा

जानलेवा नाकामियां

साफ है कि कैग ऑडिट के खुलासों पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया जा रहा। इसका सबूत इंदौर में गंदे पानी से हुई मौतें हैं, जबकि शहर को भारत के सबसे साफ शहर के अवॉर्ड मिल रहे हैं। 2019 के कैग ऑडिट में, जो 2013 से 2018 की अवधि का था, चेताया गया था कि लगभग नौ लाख लोगों को दूषित पानी सप्लाई किया जा रहा है। यह कोई अकेला मामला नहीं। 2024 में, एक कैग रिपोर्ट में बताया गया कि शहरी स्थानीय निकाय पानी की गुणवत्ता की अनिवार्य टेस्टिंग और पाइपलाइन के रखरखाव के प्रोटोकॉल को लागू करने में लगातार नाकाम रहे हैं। फिर भी, जनवरी 2026 में, सीवेज से दूषित पानी पीने से एक दर्जन से ज्यादा लोगों की जान चली जाती है और सैकड़ों बीमार पड़ जाते हैं!

राजधानी दिल्ली में भी ऐसी ही स्थिति है। हाल ही में पेश की गई दिल्ली जल बोर्ड की रिपोर्ट में बताया गया है कि 55 प्रतिशत भूजल पीने लायक नहीं। इसके अलावा, मनाही के बावजूद वॉटर ट्रीटमेंट प्लांट में कैंसर पैदा करने वाले पॉली-इलेक्ट्रोलाइट्स का इस्तेमाल किया जा रहा है। जल जीवन मिशन में फंड आ रहा है, लेकिन पानी की पाइपलाइन गायब हैं या सूखी रहती हैं।

एक पॉलिसी सर्कल रिपोर्ट में खरीद में गड़बड़ी से जुड़ी 17,000 से ज्यादा शिकायतों का जिक्र है और राजस्थान और उत्तर प्रदेश में कीमतों में 30 फीसद तक का अंतर दर्ज किया गया है, जिसके चलते कई ठेकेदारों को ब्लैकलिस्ट किया गया और 2,300 अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई हुई।

हेल्थकेयर की दिक्कतें

जवाबदेही का संकट सबसे ज्यादा हेल्थकेयर में दिखता है। आयुष्मान भारत-प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना पर कैग के 2023 के ऑडिट ने पहले ही सुर्खियां बटोरी थीं, जब इसने एक ही मोबाइल नंबर के तहत रजिस्टर्ड 749,000 'फर्जी' लाभार्थियों का खुलासा किया। जनवरी 2024 तक, यह गड़बड़ी इतनी फैल गई थी कि जांचकर्ताओं ने इसे 'पैसे के लिए हत्या' का रैकेट कहा। गुजरात में, एक डॉक्टर को पीएमजे फंड हड़पने के लिए गांव वालों की गैर-जरूरी हार्ट सर्जरी करने के आरोप में गिरफ्तार किया गया। तब से 1,000 से ज्यादा अस्पतालों को पैनल से हटाया गया और 231 करोड़ का जुर्माना लगाया गया। साथ ही, निजी अस्पताल बढ़ते नुकसान और मुफ्त इलाज के लिए पैसे न मिलने से परेशान होकर 'मुफ्त' इलाज से इनकार कर रहे हैं।

असफलता को सामान्य बनाना

कैग के नतीजों पर लोगों की प्रतिक्रिया का न होना दिखाता है कि हमने भ्रष्टाचार और असफलता को सामान्य मान लिया है, या इससे भी बुरा, कि नागरिकों को शायद ही पता है कि हर केन्द्रीय बजट में गरीबी कम करने के लिए आवंटित बड़ी रकम का कोई फायदा नहीं हो रहा। डिजिटल इंडिया का मकसद बिचौलियों को हटाना था; इसके बजाय, इसने उनकी जगह अपारदर्शिता, ऑटोमेटेड धोखाधड़ी और फर्जी लाभार्थी थोप दिए। जिन्होंने स्कॉलरशिप घोटालों को उजागर करने की कोशिश की, उन्हें जान गंवानी पड़ी। यहां तक कि बड़े पब्लिक इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स और चुनावी फंडिंग का रिश्ता- जो कैग के दायरे से बाहर है- को भी घटिया काम, प्लानिंग की नाकामियों या पूरी तरह फेल होने की गंभीर जांच के बिना स्वीकार कर लिया गया है।

कैग इन नाकामियों को दर्ज करके अपनी संवैधानिक भूमिका निभाता है; लेकिन उसकी रिपोर्ट ऐसे प्रोग्राम्स का पोस्टमॉर्टम जैसी लगती हैं, जिन्हें पार्लियामेंट के देखने से पहले ही दफना दिया जाता है। जब मीडिया इसकी बात नहीं करता तो लोगों के पास जवाबदेही, मुकदमा चलाने या स्ट्रक्चरल सुधार की मांग करने के लिए जरूरी जानकारी नहीं होती। ऐसे दबाव की कमी में, शासन बेहतर क्वालिटी की जिंदगी देने के बजाय प्रोपेगेंडा से ज़्यादा चलाया जा रहा है। ■

यह सामग्री Moneylifeindia.in पर 20 जनवरी को प्रसारित हुई।

राज्य 360° महाराष्ट्र

"हम कोई आंकड़े नहीं हैं, हमें सुनो!"

जयदीप हार्दिकर

25 जनवरी 2026 को राष्ट्रीय राजमार्ग 160 लाल झंडों की कतारों से भर गया था, क्योंकि हजारों लोग नाशिक से मुंबई की ओर मार्च कर रहे थे। उनका मिशन था मंत्रालय के दरवाजे पर दस्तक देना और राजनेताओं एवं नौकरशाहों को याद दिलाना कि सात साल पहले किया गया वादा अब तक भी पूरा नहीं हुआ है।

इससे 2018 के उस लंबे मार्च की यादें ताजा हो गईं, जब महाराष्ट्र के सबसे गरीब और हाशिये पर रहने वाले किसान और खेतिहर मजदूर विरोध गीत गाते हुए और रातें राजमार्ग पर बिताते हुए 180 किलोमीटर पैदल चले। 12 मार्च को वे भोर होते ही मुंबई में उमड़ पड़े- इस बात का पूरा ध्यान रखते हुए कि बड़े शहर के कामकाज या एसएससी बोर्ड की परीक्षाओं में कोई बाधा न आए। आजाद मैदान में लगभग 70,000 प्रदर्शनकारियों की उस शांतिपूर्ण रैली का संदेश यही था: 'हमें सिर्फ आंकड़ों तक सीमित नहीं किया जा सकता। हमारी बात सुनो।'

उस साल इन पंक्तियों के लेखक ने तीन दिन पदयात्रियों के साथ पैदल चलकर और उनसे बातचीत करके बिताए। उनलोगों ने कहा था कि उनके पास सत्ता के केन्द्र में जाकर अपनी बात स्पष्ट रूप से रखने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। उस साल मुंबई ने उनकी बात सुनी और सहानुभूति दिखाई। राज्य सरकार ने भी मानो उनकी बात सुनी और उन्हें आश्वासन दिया कि उनकी मांगें समयबद्ध तरीके से पूरी की जाएंगी। लेकिन देवेंद्र फडणवीस के नेतृत्व वाली सत्तारूढ़ गठबंधन सरकार ने तब तो अपना वादा नहीं ही निभाया, बाद में बनी एकनाथ शिंदे सरकार ने 2024 के चुनावों से पहले लाडकी बहिण योजना को लागू करने के लिए समय और संसाधन- दोनों जुटा लिए, पर किसानों की मांगें धरी रह गईं।

इसीलिए प्रदर्शनकारियों ने कहा कि 'हम सड़कों पर वापस आ गए हैं, क्योंकि हमारे साथ विश्वासघात हुआ है।' जनवरी 2026 का लंबा मार्च अन्य सभी विरोध प्रदर्शनों से इस मायने में अलग था कि इसने लोकतांत्रिक अधिकारों को पुनर्जीवित किया- जब राज्य बार-बार अपने वादों से मुकर जाता है, तो यह जनता का एकमात्र हथियार है। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) और उसके किसान मोर्चे, अखिल भारतीय किसान सभा (एआईकेएस) के नेतृत्व में, इस वर्ष के आदिवासी-मजदूर-किसान मार्च में शामिल प्रदर्शनकारी उत्तरी महाराष्ट्र के विभिन्न गांवों और बस्तियों से आए थे। यह घटना 21 जनवरी को एआईकेएस द्वारा आयोजित एक विशाल रैली के बाद हुई। 50,000 से अधिक आदिवासी गरीब लोग चारोटी गांव से पालघर स्थित जिला कलेक्टर कार्यालय तक पैदल मार्च करते हुए गए। जब जिला कलेक्टर ने उन्हें आश्वासन दिया कि राज्य सरकार द्वारा पुष्टि की आवश्यकता वाले वादों को छोड़कर बाकी सभी वादे पूरे किए जाएंगे, तो उन्होंने मुंबई तक मार्च करने का संकल्प लिया। नाशिक में एकत्र होकर उन्होंने गणतंत्र दिवस राष्ट्रीय राजमार्ग पर मनाया।

जुलूस अपनी समस्याओं के समाधान के लिए नाशिक से मुंबई तक मार्च करते किसान

उनकी मांगों में सामुदायिक और व्यक्तिगत वन अधिकारों का अनुदान, उनकी भूमि (पट्टों) का नियमितीकरण, उनके गांवों में पीने योग्य पानी और निर्बाध बिजली की आपूर्ति, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुंच, मौजूदा कानूनों का ईमानदारी से कार्यान्वयन और हाल ही में निरस्त किए गए महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण गारंटी अधिनियम (मनरेगा) की बहाली शामिल थी। एक प्रदर्शनकारी ने तो कहा भी कि 'वह गारंटी हमारी जीवनरेखा है।' ध्यान रहे कि संसद के शीतकालीन सत्र में केन्द्र सरकार ने संरचनात्मक परिवर्तन किए और मनरेगा का नाम बदलकर विकसित भारत गारंटी फॉर रोजगार एंड आजीविका मिशन ग्रामीण (वीबी-ग्राम-जी) कर दिया, जिससे काम की कानूनी गारंटी से मुकरते हुए योजना के वित्तपोषण का अधिकांश भार राज्य सरकारों के कंधों पर डाल दिया गया।

> फडणवीस सरकार ने तब तो अपना वादा नहीं ही निभाया, बाद में बनी एकनाथ शिंदे सरकार ने 2024 के चुनावों से पहले लाडकी बहिण योजना लागू करने के लिए समय और संसाधन- दोनों जुटा लिए, पर किसानों की मांगें धरी रह गईं

मुरबाद गांव के 45 वर्षीय सखाराम खरपड़े ने पारी को बताया कि 'सिर्फ नाम बदलना काफी नहीं है। काम और मजदूरी की जरूरत वाले लोग ज्यादा हैं, लेकिन ग्रामीणों को काम कम ही मिलता है- सैकड़ों में से शायद पांच या छह लोगों को ही एक बार में काम मिलता है।' पारी ने पालघर मार्च में शामिल प्रदर्शनकारियों में से एक लक्ष्मी दत्तु बोबा के हवाले से बताया कि 'पूरे साल की बात छोड़िए, हमें एक दिन भी काम नहीं मिलता।' अगर उनकी मांगें पूरी नहीं हुईं, तो वह दोबारा सड़कों पर उतरने से पीछे नहीं हटेंगी।

27 जनवरी को एक प्रतिनिधिमंडल ने मुंबई में मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस से मुलाकात की। दो घंटे से अधिक चली इस बैठक में, फडणवीस ने बिंदुवार आश्वासन दिया कि उनकी प्रत्येक मांग तीन महीने के भीतर पूरी कर दी जाएगी।

एआईकेएस के डॉ. अजीत नवाले ने प्रदर्शनकारियों को बताया कि मुख्यमंत्री ने वादा किया है कि विभागीय रिपोर्टों में हुई गलतियों के कारण हुए पिछले अन्याय को सुधारने के लिए 'वन अधिकारों से जुड़े सभी दावों की दोबारा जांच की जाएगी'। आंकड़ों से यह तथ्य सिद्ध होता है कि गढ़चिरोली और पूर्वी महाराष्ट्र के कुछ अन्य क्षेत्रों को छोड़कर, राज्य में वन अधिकार अधिनियम (एफआरए) का कार्यान्वयन अब तक शुरू भी ही नहीं हो पाया है, क्योंकि वन विभाग की ओर से इसे कड़ा विरोध झेलना पड़ रहा है।

मार्च रद्द कर दिया गया, लेकिन अनसुलझी शिकायतों का अंबार, शासन की लगातार विफलता और नौकरशाही की असंवेदनशीलता और पहुंच से बाहर होने की समस्या बार-बार सामने आई है। प्रदर्शनकारियों ने स्पष्ट किया कि उनका भविष्य इस बात पर निर्भर करेगा कि फडणवीस के आश्वासन अमल में आते हैं या नहीं। अगर नहीं, तो वे फिर से मार्च करेंगे।

इस पदयात्रा ने यह बात भी याद दिलाई कि जो लोग हमारा भोजन पैदा करते हैं, हमारे जंगलों की देखभाल करते हैं और ग्रामीण समुदायों का भरण-पोषण करते हैं, उन्हें अनदेखा नहीं किया जा सकता। वे अर्थव्यवस्था के केन्द्रीय कर्ता-धर्ता हैं। यहां तक कि यह रास्ता- ग्रामीण नाशिक को महानगर मुंबई से जोड़ने वाला लंबा राजमार्ग- भी नीतिगत घोषणाओं और जमीनी स्तर पर उनकी वास्तविकता के बीच सामाजिक-आर्थिक अंतर का प्रतीक है। वन अधिकार अधिनियम और पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम- दोनों का उद्देश्य आदिवासी और पारंपरिक वनवासी समुदायों को सत्ता वापस सौंपना और सार्थक स्थानीय शासन व्यवस्था को बढ़ावा देना था, लेकिन राज्य द्वारा इन बहुमूल्य संसाधनों पर अपना नियंत्रण कम करने से इनकार करने के कारण इनका मूल उद्देश्य ही समाप्त हो गया है। परिणामस्वरूप, इन कानूनों के पारित होने के दशकों बाद भी इनका कार्यान्वयन घटिया, विवादित और धीमा बना हुआ है।

पूर्व विधायक और सीपीआई(एम) नेता जीवा गावित ने लोगों को याद दिलाया कि 2026 का मार्च केवल कानूनों में पहले से मौजूद अधिकारों को लागू करवाने की मांग थी, और उन्होंने कहा कि अधिकारियों के साथ पहले हुई बैठकें- 2018, 2019 और यहां तक कि 2023 में भी- ठोस परिणाम नहीं दे पाईं।

क्या इस बार फडणवीस पर भरोसा किया जा सकता है? ■

जयदीप हार्दिकर वरिष्ठ पत्रकार और 'रामराव: द स्टोरी ऑफ इंडियाज फार्म क्राइसिस' पुस्तक के लेखक हैं।

सूरत ही नहीं, सीरत भी बदल रही है काशी

पुराना जमाना बीत चुका है। अब नया दौर है। लेकिन बिना सोचे-समझे विकास से इसकी आत्मा दुखी हो रही है

विश्वनाथ गोकर्ण

कहते हैं कि काशी किसी कालखंड से परे है। काशी ब्रह्मांड की अवतरण स्थली है। अलौकिक, अतुलनीय, तिलिस्म, रहस्य और मोक्ष दायिनी है। काशी में मृत्यु मंगलकारी है। काशी शिवमयी है। काशी ज्ञानमयी और सिध्दीदायिनी है। धरा की सबसे प्राचीन नगरी काशी के लिए ये सब बातें पुराणों में हैं। शिव पुराण, स्कंद पुराण और विष्णु पुराण तक में काशी का जिक्र है। वह जमाना बीत चुका है। अब नया दौर है।

काशी नए जमाने के साथ कदमताल कर रही है। विकास के करवट ले रही है। काशी की सूरत ही नहीं सीरत भी बदल रही है। अर्वाचीन काल की काशी की चर्चा पुराणों से निकल कर पर्यटन उद्योग के क्षेत्र में हो रही है। काशी का मतलब सिर्फ कर्मकांड नहीं रहा। काशी के माने सिर्फ सर्व विद्या की राजधानी भी नहीं रही। काशी यानी चांदी के सिक्कों की खनक है। होटल इंडस्ट्री है। फूड कार्नीवाल है। काशी तमाम तरह के स्ट्रीट फूड का हब बन गई है। किसी जमाने में काशी के माने होते थे टूटी-फूटी संकरी गलियां, इकहरी सड़कें, जगह-जगह गंदगी, कूड़े का अंहार, साइकिल रिक्शे की सुस्त रफ्तार, पान खाकर अड़िबाजी करते लोग। इसमें सब शामिल थे। क्या हिन्दू और क्या मुसलमान। ट्रैफिक सिस्टम का बुरा हाल था। चौराहों पर न पुलिस होती थी और न सिगनल। इस कारण जब चाहे तब और जहां देखिए वहीं जाम लग जाता था। लेकिन काशी के माने बदल गए हैं या बदल रहे हैं। अब काशी की गलियों में पत्थर के सुघड़ चौके बिछे हैं। दीवारों पर काशी की कथा का चित्रण कर दिया गया है। शहर की कई इकहरी सड़कों ने फोर लेन की शक्ल अख्तियार कर ली है।

मंदिर वाले इलाकों की सड़कों या गली में दो से तीन बार सफाई होने के कारण कूड़े नहीं दिखते। घाट किनारे और गंगा की थोड़ी सफाई ने सूरत बदल दी है। दरअसल, काशी दो हिस्सों में बंटा हुआ है। पक्का महाल और कच्चा महाल। पक्का महाल यानी पुराना बनारस। पक्का महाल यानी पक्के मकानात का मोहल्ला। इसमें सनातनी लोग रहते हैं। कच्चा महाल में किसी जमाने में मकानात कच्चे होते थे। इसकी वजह थी कि इनमें बनारसी साड़ी बीनने के लूम्स यानी हथकरघे चलते थे। जाहिर है यह मोहल्ला इस्लामी लोगों का है। लेकिन अब हथकरघों की जगह पावर लूम्स ने ले ली है, तो मकान भी पक्के हो गए हैं। गलियों और सड़कों में सुधार दिखता है। पहले बाई पास, फ्लाई ओवर या रिंग रोड की कोई कल्पना नहीं कर सकता था, अब हकीकत हैं। आने वाले साल में काशी विश्वनाथ कॉरिडोर और गंगा घाट तक जाने वाली कई तंग गलियों को चौड़ा कर फोर लेन रोड बनाने की योजना पर काम चल रहा है। इन गलियों के सैकड़ों मकानों को मुआवजा देकर खाली कराया जा रहा है। इनमें सबसे मुख्य है दालमंडी का इलाका। दालमंडी सबसे बड़े व्यावसायिक केन्द्रों में से एक है। दालमंडी की गली ऐतिहासिक है। इसमें रोज का टर्न ओवर करोड़ों का है। इसके चौड़ीकरण को लेकर बनारस के एक तबके में रोष है। उनका कहना है कि चूंकि इलाके के बाशिंदे मुसलमान हैं, इसीलिए यहां के मकानों का ध्वस्तीकरण किया जा रहा है। धरातल पर देखा जाए, तो ज्यादातर मकान खास तबके के हैं, लेकिन दालमंडी में होने वाले व्यवसाय में पचास फीसद से ज्यादा हिस्सेदारी दूसरे तबके की भी है। मकान ही नहीं रहेंगे, तो बाजार उजड़ कर कहा जाए, इसे लेकर दोनों ही तबके के लोग कशमकश में हैं।

कमोबेश कुछ ऐसी ही स्थिति कचहरी के पास के अर्दली बाजार क्षेत्र की है। नाम से जाहिर होता है कि ये इलाका कभी कचहरी में काम करने वाले अर्दलियों का था। इन अर्दलियों के बच्चों ने हॉकी खेलना क्या शुरू किया कि पूरा इलाका इंडियन हॉकी की नर्सरी कहलाने लगा। करीब दो सौ मीटर के इस क्षेत्र के तकरीबन हर घर से कम-से-कम एक बच्चे ने नेशनल लेवल पर हॉकी खेली। करीब एक दर्जन बच्चों ने जूनियर से लेकर सीनियर लेवल तक इंडियन हॉकी टीम का प्रतिनिधित्व किया। इसी क्षेत्र में मोहम्मद शाहिद नाम का एक सितारा जन्मा जिसे भारत का दूसरा ध्यानचंद कहा गया। शाहिद भारतीय हॉकी टीम के कप्तान बने और भारत सरकार ने उन्हें अर्जुन अवार्ड से लेकर पद्मश्री अलंकरण तक से नवाजा। ऐसे में इस मार्ग का नाम मोहम्मद शाहिद मार्ग कर दिया गया। अब सड़क चौड़ीकरण के नाम पर इस इलाके को ध्वस्त कर दिया गया। इसमें मोहम्मद शाहिद सहित करीब 47 लोगों के घर ढहा दिए गए। सड़क पर लगी मोहम्मद शाहिद के नाम की पट्टिका को उखाड़ फेंका गया। इस इलाके के घरों का जो मुआवजा दिया गया वह काशी विश्वनाथ कॉरिडोर में दिए गए मुआवजे की तुलना में बहुत कम है।

काशी में विकास की हवा मणिकर्णिका तक पहुंच गई है। मणिकर्णिका पर शवदाह के लिए 38 नए तरह के प्लेटफॉर्म बनाए जा रहे हैं। उन पर ऊंची चिमनियां लगाई जा रही हैं। घाट के विस्तार के लिए पुरानी मढ़ियों को ध्वस्त किया जा रहा है। मढ़ी यानी पुरोहितों के बैठने का स्थान। लकड़ी व्यवसाय को भी सरकारी तंत्र के अधीन किए जाने की बात है। घाट पर सामुदायिक भवन, सामुदायिक शौचालय और तमाम तरह की सुविधाओं के लिए नए भवन बनाए जाने की योजना है। सरकारी तंत्र का कहना है कि ये सारी चीजें शवदाह के लिए आने वाले लोगों की सुविधा के लिए की जा रही हैं। लेकिन काशी के पुरनिये विकास की नई बयार से क्षुब्ध हैं। उनका कहना है कि परिजन के शवदाह के लिए आने वाले लोग इस तरह की सुविधा के कभी इच्छुक नहीं रहे। शवदाह के लिए लकड़ी के दाम को लेकर जिच हो सकती है, लेकिन वे व्यवसायियों को हटाए जाने के खिलाफ हैं। काशी में गंगा किनारे शौच को पाप माना जाता है। ऐसे में कौन चाहेगा कि घाट पर शौचालय बने। वैसे ये आम चर्चा है कि घाट पर स्थित एक आश्रम के महंत को सुविधा देने के लिए इसके विकास की बात की जा रही है। महंत महोदय सत्ता के करीब होने के कारण परंपरागत प्राचीन महाश्मशान को हटवाने के प्रयास में लगे हैं। बहरहाल, बनारस के पर्यटन अधिकारी ने बयान जारी कर कहा है कि काशी के टूर पैकेज में शीघ्र ही मणिकर्णिका का नाम भी जुड़ने वाला है। अगले कुछ दिनों में मणिकर्णिका का स्वरूप ही बदल जाएगा। मोक्षदायिनी काशी धर्म नगरी से ज्यादा पर्यटन नगरी हो जाएगी।

वैसे, बनारस फिलहाल प्रयागराज के माघ मेले से लौट रहे तीर्थयात्रियों के प्रवाह से त्रस्त है। बनारस की यह आम समस्या रही है। ट्रैफिक जाम यहां आम है। काशी में ट्रैफिक सिस्टम सुधारने के लिए रोप-वे शुरू किया जाने वाला है। वाराणसी जंक्शन स्टेशन से दशाश्वमेध घाट के बीच चलने वाले इस रोप-वे में 148 हिंडोले चलेंगे। कुछ महीनों में ये शुरू हो जाएंगे।

पर्यटन को बढ़ावा देने की दृष्टि से होटल इंडस्ट्री को मजबूत किया जा रहा है। गली-गली में होम स्टे या गेस्ट हाउस खुल गए हैं। शहर के बाहरी इलाके में इंटरनेशनल क्रिकेट स्टेडियम क्या बन रहा है, काशी में बड़े-बड़े होटल्स की लाइन लग गई है। ताज, रमाडा और रैडिसन जैसे स्टार होटल्स पहले से ही थे। हॉस्पिटेलिटी बिजनेस के इन स्टालवर्ल्ट्स ने काशी के गंगा किनारे की प्राचीन इमारतों को खरीद कर उसे धरोहर का लुक देते हुए पैर पसार दिए। काशी में होटल उद्योग को पनपते देख देश के कई राज परिवारों ने भी घाट किनारे की अपनी ऐतिहासिक धरोहरों को होटल की शक्ल देना शुरू कर दिया है। ताज होटल ने राम घाट में कई एकड़ में फैले मेहता अस्पताल को खरीद कर ताज अवन्तिका बना डाला। इसी तरह सिंधिया परिवार ने मणिकर्णिका घाट के पास स्थित अपने गंगा महल को होटल बनाने की पहल कर दी है। आने वाले कुछ महीनों में यह होटल अपना काम शुरू कर देगा। गंगा महल में लक्ष्मी नारायण का प्राचीन मंदिर अवस्थित है। प्राचीन पंचगंगा घाट स्थित सिंधिया परिवार के ही एक और बाला जी मंदिर को भी होटल बनाए जाने की पहल की जा रही है।

गंगा घाट किनारे के होटल्स तक टूरिस्ट को लाना पहले थोड़ा मुश्किल होता था, लेकिन सरकारी पहल ने इसे आसान कर डाला है। फिलहाल टूरिस्ट को एयरपोर्ट से काशी के अंतिम घाट नमो घाट तक सड़क मार्ग से लाया जा रहा है। उन्हें फिर वहां से स्टीमर या क्रूज से अमुक होटल तक पहुंचाया जा रहा है, लेकिन जल्द ही एयरपोर्ट से हेलिकॉप्टर सेवा शुरू की जा रही है जो नमो घाट तक की उड़ान भरेगी। आगे फिर स्टीमर या क्रूज। इसके लिए नमो घाट पर तीन हेलिपैड बनाए गए हैं। काशी के 84 घाटों को दर्शन कराने के लिए सैकड़ों स्टीमर और नावों के अलावा अभी एक दर्जन क्रूज भी काशी में चल रहे हैं। काशी से गंगा सागर तक की नियमित क्रूज यात्रा की परियोजना पर भी काम चल रहा है।

दरअसल, काशी विश्वनाथ कॉरिडोर बनने के बाद से काशी का स्वरूप ही बदल गया है। काशी, गया, प्रयाग के तीर्थाटन के पैकेज में अब अयोध्या का नाम भी जुड़ जाने से यहां देश विदेश के पर्यटकों की भीड़ बढ़ गई है। विंध्याचल कॉरिडोर बन जाने के बाद से इस भीड़ में और इजाफा हुआ है। काशी में जल्द ही कालभैरव कॉरिडोर शुरू होने वाला है। यह कॉरिडोर कालभैरव से शुरू होकर काशी के वैकुंठ लोक कहे जाने वाले बिन्दुमाधव मंदिर तक जाएगा। याद रहे कि यह वही बिन्दुमाधव मंदिर है जिसे मुगल बादशाह औरंगजेब ने ध्वस्त कर आलमगीर की मस्जिद बनवा दिया था। अगर इस वर्ष काशी कालभैरव कॉरिडोर बनना शुरू हो गया, तो तीर्थाटन को नया आयाम मिलेगा। पर्यटन उद्योग में बढ़ोतरी को देख काशी का तंत्र तो खुश है, लेकिन काशी का गण इससे नाखुश है। आम बनारसियों का कहना है कि विकास की लहर में उनका शहर कहीं गुम हो गया है। सोशल मीडिया पर दिखाए जा रहे तमाम रील्स और मीम्स इस शहर की सचाई नहीं हैं। ■

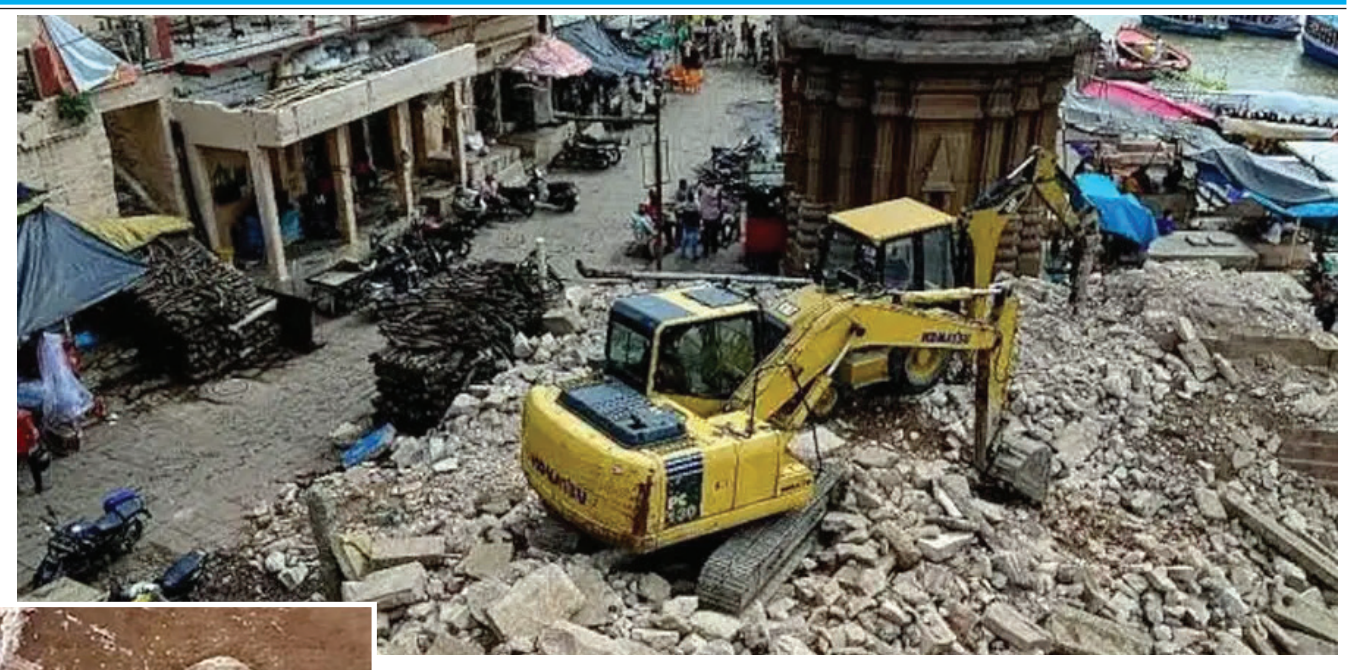

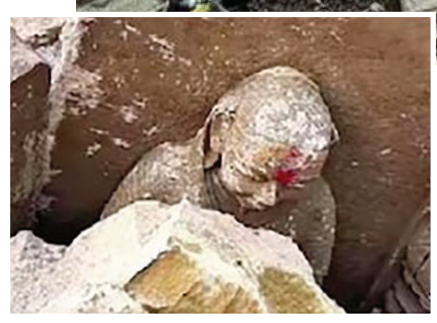

ध्वंस वाराणसी का मणिकर्णिका घाट जिसे सौंदर्यीकरण के नाम पर ध्वस्त किया जा रहा

कालभैरव कॉरिडोर बनना शुरू हो गया, तो तीर्थाटन को नया आयाम मिलेगा। पर्यटन उद्योग में बढ़ोतरी को देख काशी का तंत्र तो खुश है, लेकिन काशी का गण इससे नाखुश है। आम बनारसियों का कहना है कि विकास की लहर में उनका शहर कहीं गुम हो गया है

नफरती सियासत पर सवार धामी सरकार

नई रिपोर्ट ने हमारी सबसे बुरी आशंकाओं पर मुहर लगा दी है- एक शांत प्रदेश को कट्टरपंथ का अखाड़ा बना दिया गया है

रश्मि सहगल

बुल्ले शाह को 'पंजाबी प्रबोधन का जनक' कहा जाता है। वह ऐसे सूफी संत थे जिनकी अद्भुत रचनाएं प्यार, एकता और आध्यात्मिक आजादी की बात करती हैं। हिन्दू, सिख और मुस्लिम सभी उनका सम्मान करते हैं। 24 जनवरी 2026 की रात को हिन्दू रक्षा दल के कुछ कट्टरपंथियों ने मसूरी के विनबर्ग-एलन स्कूल में घुसकर उनकी मजार को तोड़ दिया। उनका दावा था कि 100 साल पुरानी यह इमारत उनकी 'देवभूमि' पर अवैध कब्जा थी। सोचिए, उन्हें इस बात का कितना यकीन था कि उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं होगी कि उन्होंने हथौड़े और रॉड से मजार तोड़ने का वीडियो भी अपलोड कर दिया। उत्तराखंड पुलिस ने तीन लोगों के खिलाफ एफआईआर दर्ज की, लेकिन किसी को गिरफ्तार नहीं किया।

नवंबर 2025 में दून स्कूल के अंदर स्थित एक अन्य सौ साल पुरानी मजार को नफरत फैलाने वाले राधा धोनी के नेतृत्व वाले एक अन्य हिन्दुत्ववादी समूह के कहने पर गिरा दिया गया। धोनी सनातन संस्कृति नाम के एक दक्षिणपंथी संगठन का प्रमुख है, जिसका मकसद मुस्लिम दुकानदारों, सड़क किनारे चाय बेचने वालों और रेहड़ी वालों को निशाना बनाना लगता है।

उत्तराखंड के मुख्यमंत्री पुष्कर सिंह धामी, जिनका बेटा दून स्कूल में पढ़ता है, जनता को यह बताने में गर्व महसूस करते हैं कि उनके कार्यकाल में 400 से ज्यादा 'अवैध' मजारों को गिराया गया। अपने ही अधिकारियों द्वारा किए सर्वे के आधार पर धामी दावा करते हैं कि उनकी सरकार ने 'जमीन जिहादियों' से 5,000 एकड़ जमीन वापस ले ली।

दो एक्टिविस्ट ने इस मुस्लिम विरोधी प्रोपेगेंडा की सच्चाई जानने का फैसला किया। उन्होंने उत्तराखंड के कोने-कोने में घूमकर यह डॉक्यूमेंट किया कि कैसे 2021-25 के बीच मुसलमानों को सोचे-समझे तरीके से हिंसा का शिकार बनाया गया, जिसमें सैकड़ों लोगों को अपना घर छोड़कर अपने ही देश में शरणार्थी बनने पर मजबूर होना पड़ा। 'एक्सक्लूडेड, टार्गेटेड एंड डिस्प्लेस्डः कम्युनल नैरेटिव्स एंड वायलेंस इन उत्तराखंड' नाम की यह रिपोर्ट एसोसिएशन ऑफ प्रोटेक्शन ऑफ सिविल राइट्स (एपीसीआर) ने 22 जनवरी को प्रकाशित की। यह रिपोर्ट पुष्टि करती है कि कैसे एक शांतिपूर्ण राज्य कट्टरपंथ का अड्डा बन गया है।

यह नफरती अभियान दिसंबर 2021 में हरिद्वार धर्म संसद में शुरू हुआ, जहां यति नरसिंहानंद, प्रबोधानंद गिरि, यतींद्रानंद गिरि, साध्वी अन्नपूर्णा, स्वामी आनंद स्वरूप और कालीचरण महाराज ने खुलेआम हिन्दू राष्ट्र और मुसलमानों को मारने की बात कही। उनके भाषणों से हिंसा, आर्थिक बहिष्कार और नफरत भरे अपराधों में तेजी आई, जो 2023 की पुरोला घटना में चरम पर पहुंच गई, जब अपहरण के एक झूठे मामले की वजह से मुस्लिम परिवारों को संपत्तियां बेचकर भागना पड़ा। यह मॉडल उत्तरकाशी, टिहरी, चमोली और गैरसैंण जैसे जिलों में पसर गया। धामी ने 'जमीन जिहाद', 'मजार जिहाद, 'थूक जिहाद' और 'लव जिहाद' की बात करके सांप्रदायिकता को खुल्लमखुल्ला बढ़ाया। 'इंडिया हेट लैब' की सालाना रिपोर्ट में उत्तराखंड के मुख्यमंत्री को 2025 का 'सबसे ज्यादा नफरत फैलाने वाला भाषण देने वाला' बताया गया, जिसके कुछ दिनों बाद धामी ने कहा कि वह 'इस टैग को स्वीकार करते हैं।' उनका ताजा फतवा केदारनाथ और बद्रीनाथ मंदिरों में गैर-हिन्दुओं के प्रवेश पर रोक का है।

एपीसीआर रिपोर्ट की खासियत है कि इसमें उत्तराखंड में सुनियोजित हिंसा के शिकार लोगों की बातें रिकॉर्ड की गईं। सबसे बुरा पुलिस का मूक दर्शक बन जाना है, जो ज्यादातर मामलों में अपराधियों के खिलाफ कार्रवाई करने से पीछे हट जाती है। कुछ उदाहरण काबिलेगौर हैं:

23 अक्तूबर 2024 को देवभूमि रक्षा अभियान के प्रमुख स्वामी दर्शन भारती के नेतृत्व में दक्षिणपंथी समूहों ने उत्तरकाशी के बाराहाट में एक मस्जिद को गिराने की मांग करते हुए रैली निकाली। मुसलमानों की दुकानों में तोड़फोड़ और लूटपाट की गई। चार लोगों के परिवार में अकेली कमाने वाली सदस्य रेशमा हुसैन (37) ने कहा, 'उन्होंने मेरी दुकान का ताला तोड़ दिया और अंदर घुस गए। लगभग 1 लाख रुपये का नुकसान हुआ।'

पास के श्रीनगर शहर में एक स्थानीय भाजपा नेता लखपत सिंह भंडारी ने 15 मुस्लिम परिवारों के पलायन को उकसाया। लोगों को मजबूरन नजीबाबाद जाना पड़ा। श्रीनगर के एक सरकारी स्कूल में टीचर शोएब अख्तर ने कहा, 'लखपत भंडारी को मुख्त अतिथि के तौर पर बुलाया गया था, जहां प्रिंसिपल (जिस स्कूल में शोएब पढ़ाते हैं) ने लव जिहाद और जमीन जिहाद की बात की। कोई प्रिंसिपल पब्लिक में ऐसी बातें करता है, तो बच्चों पर क्या असर पड़ेगा?'

उसी स्कूल में एक इंग्लिश टीचर ने 12वीं क्लास के छात्र अहमद से पूछा कि उसके जैसे लोग अवैध मस्जिदें बनाने के लिए जमीन पर कब्जा क्यों कर रहे हैं। अहमद कहता है, 'मैंने कौन सी जमीन कब्जा की? ऐसा महसूस होता है कि मुझे ही निशाना बनाया जा रहा है।'

श्रीनगर में रहने वाले सामाजिक कार्यकर्ता मुकेश सेमवाल का मानना है कि यह सांप्रदायिक अशांति जानबूझकर फैलाई गई ताकि भाजपा केदारनाथ विधानसभा चुनाव जीत सके। अयोध्या और बद्रीनाथ की सीटें हारने के बाद केदारनाथ का चुनाव अहम हो गया था। अगस्त 2024 में चौरस में सांप्रदायिक तनाव तब और बढ़ गया जब दक्षिणपंथी समूहों ने पांच मुस्लिम दुकानदारों और उनके परिवारों को शहर छोड़ने के लिए मजबूर किया। उकसावे की वजह? एक हिन्दू महिला और नजीबाबाद से आया एक मुस्लिम कथित तौर पर रिलेशनशिप में थे। 'लव जिहाद' के आरोपी युवक के पिता वसीम ने कहा, 'वे दोस्त थे। क्या दोस्ती अपराध है? क्या हमारे बच्चे किसी से दोस्ती करने से पहले धर्म देखेंगे? उन्होंने अफवाहों के आधार पर हमें भगा दिया। लड़की के परिवार ने भी बेटे के खिलाफ कभी शिकायत नहीं की।'

पचास साल के तसीम अहमद पिछले 45 सालों से चमोली जिले के गौचर कस्बे में रह रहे हैं। 15 अक्तूबर 2024 को उनके भाई का अपनी स्कूटी पार्क करने को लेकर एक हिन्दू से झगड़ा हो गया। इसपर हिन्दुत्व ब्रिगेड ने दस मुस्लिम दुकानदारों को कस्बा छोड़ने को मजबूर कर दिया। अहमद ने कहा, 'पार्किंग के छोटे से झगड़े ने हमारी जिंदगी तबाह कर दी। हम 45 साल से रह रहे थे। किसी ने साथ नहीं दिया। हमें आधी रात में गौचर छोड़ना पड़ा।'

चमोली के नंदप्रयाग में एक मुस्लिम नाई पर छेड़छाड़ के आरोपों के बाद अगस्त-सितंबर 2024 में मुस्लिम विरोधी अभियान ने हिंसक रूप ले लिया। 22 अगस्त को नाई को अपनी दुकान खाली करने को कहा गया। वह नजीबाबाद वापस चला गया। 20 साल से ड्राईक्लीनिंग की दुकान चलाने वाले और 1975 से नंदा घाट में रहने वाले उथमान हसन ने बताया कि 3 सितंबर की रात को 15 परिवारों को भागना पड़ा। '31 अगस्त को स्थानीय लोगों ने नाई के खिलाफ एफआईआर दर्ज कराई... 1 सितंबर को व्यापार मंडल ने नंदा घाट पुलिस स्टेशन के सामने प्रदर्शन का आह्वान किया। हम मुसलमान भी उसमें गए। सोचा कि हमें कारोबारी समुदाय का साथ देना चाहिए। बैठक में 'मुल्लों के दलालों को जूते मारो सालों को' जैसे मुस्लिम विरोधी नारे लगाए गए।

हसन की दुकान में हिन्दुत्ववादी भीड़ ने तोड़फोड़ की और उसके गल्ले से 4 लाख रुपये चुरा लिए। उन्होंने सब कुछ लूट लिया और नदी में फेंक दिया। उसने इसका आरोप हिन्दुत्व नेता दर्शन भारती पर लगाया, जिसने मस्जिद के खिलाफ उत्तरकाशी रैली का नेतृत्व किया था। हसन कहते हैं, 'उसे याद करके आज भी मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं'।

हसन ने सुरक्षा के लिए उत्तराखंड हाईकोर्ट में याचिका दायर की। कोर्ट ने एसएसपी को यह सुनिश्चित करने का आदेश दिया कि किसी भी समुदाय के खिलाफ कोई अप्रिय घटना न हो, इसके बावजूद किसी भी मुसलमान ने इतना सुरक्षित महसूस नहीं किया कि वापस लौट सके। हसन ने अपनी दुकान फिर से खोली, लेकिन पाया कि कोई भी उसका साथ देने या उससे बात करने को तैयार नहीं था, जैसे वह कोई अपराधी हो। फिलहाल, नंदा घाट में हसन अकेले मुस्लिम हैं। यह हमारे समय की एक दुखद सच्चाई है।

अगर आपको धामी के सांप्रदायिक एजेंडे का कोई और सबूत चाहिए, तो उत्तराखंड यूनिफॉर्म सिविल कोड एक्ट, 2024, धर्म की आजादी और गैर-कानूनी धर्मांतरण पर रोक (संशोधन) बिल, और अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान बिल, 2025 पर गौर करें, जो मुस्लिम-नियंत्रित मदरसा शिक्षा बोर्ड (जहां मुसलमानों के पास 13 में से 9 सीटें थीं) को खत्म करता है और उसकी जगह एक सरकारी संस्था बनाता है जहां मुसलमानों के पास 12 में से सिर्फ एक सीट है।

शासन के मोर्चे पर नाकाम रहने के बाद, धामी को भरोसा है कि उनके नफरती बोल 2027 के विधानसभा चुनावों में चुनावी फायदा दिलाएंगे। ■

तोड़फोड़ मसूरी स्थित बाबा बुल्ले शाह की मजार जिसमें कुछ नफरती तत्वों ने तोड़फोड़ की

नफरती अभियान 2021 में हरिद्वार धर्म संसद से शुरू हुआ। इसमें खुलेआम हिन्दू राष्ट्र और मुसलमानों को मारने की बात कही गई। इससे मुसलमानों के खिलाफ नफरती हिंसा और आर्थिक बहिष्कार में तेजी आई

मनरेगा और ग्रामीण स्वराज का असली मकसद

किसान और खेत मजदूर- दोनों का संघर्ष आगामी दशक की दस्तक है। इनको आमने-सामने करना सामाजिक न्याय के खिलाफ

मीनाक्षी नटराजन

स्वराज या आजादी कभी एकतरफा नहीं होती। सत्यान्वेषण की गरज यह सिखाती है कि किसी भी मुद्दे के हर पहलू को खंगालना चाहिए। महात्मा गांधी नरेगा के तहत दिया गया काम मांगने का हक समाप्त हुआ। उसका स्थान एक योजना ने ले लिया। उस पर बहुत लिखा जा चुका है। पर मनरेगा के आर्थिक-सामाजिक पक्ष और राजनीतिक-आर्थिकी को समझना जरूरी है। वह काफी पेचीदा है। पूरे भारत में वह एक-सा नहीं है। उन इलाकों में जहां बारिश कम है और साल भर में बमुश्किल एक फसल होती है, वहा मनरेगा जीवनदायिनी साबित हुई। अन्य क्षेत्र में कृषि कार्य के आधिक्य से मनरेगा पर काम के बतौर निर्भरता कम थी। खासकर जहां कम-से-कम दो या तीन फसल की पैदावार होती है। इत्तेफाक से मध्यप्रदेश के पश्चिमी मालवा अंचल में समृद्ध खेती होती रही है, हालांकि जल स्तर घटने से वहां भी बदलाव आ रहा है।

अनेक ग्राम चौपालों में संवाद से कुछ तथ्य सामने आए। पहला सवाल तो यह था कि क्या ऐसे इलाके में मनरेगा की कोई जरूरत नहीं थी? तो क्या अब वहां इस हक की समाप्ति का कोई असर नहीं पड़ेगा? क्या मनरेगा को केवल ऐसे ही क्षेत्रों तक सीमित रखना चाहिए था, जहां खेती पर निर्भरता संभव नहीं? सो पुनः बहाल करने की मांग में इन क्षेत्र विशेष की आवश्यकता को ध्यान रखना चाहिए? क्या वह मात्र रोजगार सृजक हक है या कोई परिवर्तनकारी बुनियादी व्यवस्था?

मनरेगा, मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी की दर स्थापित करने वाली गारंटी है। जैसे न्यूनतम समर्थन मूल्य ने उपज के न्यूनतम दाम तय किए। आजादी के बाद के शुरुआती दशक के इस फैसले ने फसल को औने-पौने दाम में बिकने नहीं दिया। बाद की यूपीए सरकार ने लघु वनोपज का भी समर्थन मूल्य तय किया। बिचौलियों, शोषणकारी आढ़तियों के कब्जे को समाप्त किया। गोयाकि उसमें अब भी बहुत सुधार की जरूरत है। समर्थन मूल्य में दलहन-तिलहन की खरीद केवल उपज के 25 प्रतिशत की होती है। अनाज पर अधिकतम की सीमा नहीं है। सीमांत किसान के लिए यह बहुत सुखद नहीं होता। सामाजिक तौर पर भी यह किसान अंतिम पायदान पर होते हैं। मंडियों में सरकारी खरीद पर निजी व्यापारियों की चमक-दमक और दबदबा कायम रहता है। मगर सरकारी भाव की कानूनी बाध्यता तो है।

मनरेगा ने वैसा ही परिवर्तनकारी हक मजदूरों को दिया। आदिवासीबहुल जिले के पास निवास होने से समूचा बचपन सुबह चौक पर ट्रेन से उतरकर पहुंचे मजदूर स्त्री-पुरुष को देखते बीता है। लंबे समय तक आने और फिर दस-बीस रुपये जो बढ़कर पचास हुए से ऊपर कभी दिहाड़ी नही दी गई- चाहे घरेलू निर्माण कार्य हो या कटाई का काम। एक तरह से सस्ती मजदूरी पर पूरी ग्रामीण आर्थिकी चलती थी। सज्जन मालिक थोड़ा अनाज ले जाने देते थे, वह भी जो कचरे से निकलता है। मनरेगा ने यह बदल दिया। कलेक्टर रेट ने पहले दौर में 150 रुपये, फिर बढ़ते-बढ़ते इस पश्चिमी मालवा क्षेत्र में मजदूरी की दर को न्यूनतम दो सौ बाईस कर दिया। आज कहीं भी तीन सौ से कम की मजदूरी नहीं होती। मनरेगा ने मजदूरों की दिहाड़ी में क्रांति लाई। आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि बार-बार यह मांग उठी की मनरेगा को खेती से जोड़ा जाए। यह आज भी बहुत जगह कहा जाता है, खासकर बड़े किसान यह सिफारिश करते हैं।

पहल मनरेगा को बचाने के लिए लगाई गई चौपाल

मनरेगा को खेती से जोड़ा भी गया। सीमांत किसान को अपनी खेती की जमीन के उन्नयन का मौका दिया गया। वह अपने परिजन समेत काम करे, तो मजदूरी सरकार देती थी। यदि मनरेगा को संपूर्ण खेती से जोड़ा जाता, तो मजदूरी की दर फिर से गिर जाती। आज भी ऐसा ही होगा यदि पुनः विवेचना हुई। मजदूर सरकारी रेट तो पाएंगे, मगर प्रतिस्पर्धात्मक मजदूरी का अंतर चूक जाएंगे। केवल तय सरकारी रेट पर काम करना पड़ेगा।

नई योजना तो और भी घातक है। अब चूंकि काम मांग आधारित नहीं होगा, बारहमासी भी नहीं रहेगा, तो खेती के समय पर कोई विकल्प नहीं होगा। खेत मालिक की तय दर पर मजबूरी में मजदूरी करनी पड़ेगी। परिणामस्वरूप एक ही साल में मजदूरी की दर घटने लगेगी।

अनेक प्रगतिगामी मानते हैं कि ग्रामीण क्षेत्र में जहां खेत मालिक पिछड़े वर्ग से आते है, उन्हें यह नई व्यवस्था बहुत भाती है। पुरानी सामाजिक वर्चस्व की वापसी होगी। यह वर्ग सत्तारूढ़ दल के काफी निकट भी है। इसी वर्ग के एक छोटे समूह ने बहुसंख्यवादी विचार को प्रश्रय दिया है- वही समूह जो अनुसूचित वर्ग को ज़मीन के पट्टे देने के खिलाफ रहा, बैंकों के राष्ट्रीयकरण और सूदखोरी पर कानूनी प्रतिबंध से सख्त ऐतराज रखता है और दोषपूर्ण मनाता है। पर पिछले सालों में खेती पर दबाव बढ़ा है।

किसान को उचित दाम मिले, समर्थन मूल्य पर खरीद हो, मंडियों में लोकतंत्र पुनः लौटे, ग्राम राजस्व व्यवस्था में आमूलचूल बदलाव आए। यह सब मनरेगा को मारकर या सीमांत किसान के इतर की खेती से जोड़कर नहीं हो सकता

सीमांत किसान को भी बढ़ी मजदूरी की दर से ही भुगतान करना पड़ता है। संसाधन के अभाव में वे पिछड़ते हैं। फिर किसान की लागत हर तरफ से बढ़ी है। उस अनुपात में फसल के दाम नहीं बढ़े। कुछ क्षेत्र जहां पहले सोयाबीन जैसी फसल में मुनाफा मिलता था- 2011-12 में साढ़े चार हजार तक प्रति किलो भाव था- वहां आयातित सोयाबीन ने बाजार गिरा दिया। सरकार बड़े व्यवसायियों के अनुरूप सीमा शुल्क लगाती है और फॉर्चूनर तेल के साथ संबंधों को प्रगाढ़ बनाने में लिप्त है। सोयाबीन सस्ती होती है, तेल महंगा होता है। देश के भीतर खरीद मूल्यों में गिरावट आई। देश के बाहर भी वही हुआ। चीन जो सबसे बड़ा खरीदार था, वह ब्राजील से सस्ते में लेने लगा। ऐसे में बड़े किसान जो भूमि स्वामी हैं, पिछड़े तबके से हैं, उनकी आर्थिक दशा भी हाशिये पर आई। उन्हें बढ़ी लागत के साथ-साथ बढ़ी मजदूरी के दर का सामना करना पड़ा। उस अनुपात में कमाई नहीं हो रही है।

सरकार पर बस नहीं चला, तो सारी खीझ सबसे कमजोर पर निकली। इस वर्ग को इस बदलाव से राहत महसूस हो सकती है। कदाचित सत्तारूढ़ दल ने उनको अपने पक्ष में करने के लिए यह किया हो, ताकि जाति जनगणना और सामाजिक न्याय के अभियान को पलटा जाए। उनमें से अधिकांश पिछड़े वर्ग के संभ्रांत समुदाय हैं। राजनीतिकरण के अभाव में यह पैंतरा सुखद हो सकता है। सनद रहे कि सरकार ने इस वर्ग की पीड़ा को समझकर यह कदम कतई नहीं उठाया है- यह वर्ग अपनी मेहनत, हुनर और उद्यमशीलता से संभ्रांत हुआ है।

आजादी के बाद के शुरुआती कानूनी सुधार जैसे मालगुजारी जमींदारी उन्मूलन, आयकर मुक्त और राहत सब्सिडी से हुआ है। इस वर्ग ने खेती में प्रयोग किए, पॉली हाउस से लेकर उद्यानिकी, औषधीय फसल, बगीचे आदि से खेती को लाभप्रद बनाने की भरसक कोशिश की है। इस वर्ग के खिलाफ कोई राय बनाना भी स्वराज के साथ बेईमानी होगी। मगर इस वर्ग को भी चाहिए कि अपने आर्थिक तनाव को कम करने के लिए सबसे कमजोर को लाचार न बनाए जाने दें। उनके लिए खड़े होकर हक की पैरवी करें। फिर साथ ही अपने लिए भी उचित भाव, फसल बीमा के युक्तियक्तकरण की मांग को बढ़ाएं।

हर राजनीतिक संगठन दोनों पक्ष को साथ उठाए। कृषि में भी बड़े बदलाव के बिना तनाव कम नहीं होगा। वाणिज्य विभाग में आयात-निर्यात नीति बनते वक्त केवल बड़े व्यापारी हावी होते हैं। वहां किसान की आवाज नहीं पहुंचती। आज के टैरिफ दौर में सीमा शुल्क तय करते वक्त किसान को नजरअंदाज न करें। औसत नुकसान मापने की प्रक्रिया दोषपूर्ण है। किसान को विश्वास में नहीं लेती। वह एक क्षेत्र को इकाई मानती है न कि खेत को, जबकि नुकसान खेत का होने पर व्यक्तिगत किसान प्रभावित होता है। फसल बीमा निजी कंपनियों को लाभ देती हैं। किसान को कभी मुआवजा नहीं मिलता। वर्षा परिमापक यंत्र हर गांव में लगाया जा सकता है, पर पटवारी हल्के में लगता है। कम या अधिक बारिश की सही माप नहीं हो पाती। किसान से कभी कुल रकबे की चर्चा नहीं होती। पैदावार इतनी हो जाती है कि बाजार गिर जाता है जबकि ग्रामसेवक इसी कार्य के लिए वेतन लेते हैं। किसान औसत फसल छुपाते हैं कि व्यवस्था पर विश्वास नहीं। सो सही में जब कम पैदावार होती है, तब भी तीन साल की औसत में बराबरी दर्शाई जाती है। उसका नुकसान होता है।

स्वराज की सोच का मतलब और मकसद संपूर्ण ग्रामीण अर्थव्यवस्था को समझना, हर वर्ग के साथ संवेदनशील होना है। असल ग्रामीण स्वावलंबन और विकास तभी संभव है, जब खेत और मजदूर- दोनों को न्याय मिले। वह मजदूर की मजदूरी को कम करके नहीं होगा। यह खेत मालिकों को समझना होगा। मशीन से महंगी मजदूरी ही असल समृद्धि है। पर किसान को उचित दाम मिले, फसल बीमा में सुधार हो, किसान की वाणिज्य नीति में दखल हो, समर्थन मूल्य में खरीद हो, मंडियों में लोकतंत्र पुनः लौटे, ग्राम राजस्व व्यवस्था में आमूलचूल बदलाव आए। यह भी जरूरी है। यह सब मनरेगा को मारकर या सीमांत किसान के इतर की खेती से जोड़कर नहीं हो सकता। किसान और खेत मजदूर- दोनों का संघर्ष आगामी दशक की दस्तक है। इनको आमने-सामने करना सामाजिक न्याय के खिलाफ है। ■

'आपदा में अवसर' का एक और कुत्सित खेल

सुरक्षा के नाम पर बनी विकास की वेदी पर निकोबार के आदिवासियों का अस्तित्व ही खत्म किया जा रहा

पंकज चतुर्वेदी

ग्रेट निकोबार द्वीप समूह हिन्द महासागर के नीले पानी के बीच है। यह हिन्द महासागर में बंगाल की खाड़ी के दक्षिण पूर्वी भाग में स्थित 572 द्वीपों का समूह है। ये द्वीप इंडोनेशिया और थाईलैंड के पास हैं। 2013 में इसे यूनेस्को के जैवमंडल कार्यक्रम (ह्यूमन एंड बायोस्पियर प्रोग्राम) में शामिल किया गया था। यह समृद्ध जैव विविधता और वन्यजीवों की एक असाधारण विविधता का घर है। यह दुनिया में सबसे अच्छी तरह से संरक्षित उष्णकटिबंधीय वर्षा वनों में से एक है। यहां धरती की सबसे पुरानी आदिवासी आबादी रहती है। इस समय द्वीप की आबादी मात्र करीब 8,000 है। 2004 में सुनामी आने पर सुरक्षा कारणों की दृष्टि से प्रशासन ने तटीय गांवों- खास तौर पर, चिनगेनह, पुलो बाहा, और कोकेओन-के लोगों को अस्थायी शिविरों और पुनर्वास बस्तियों में भेज दिया गया था। यह पूरी तरह अस्थायी व्यवस्था थी। यह भूमि 2004 के सुनामी तक 27 गांवों में निकोबारी लोगों द्वारा आबाद थी जिसके बाद उन्हें फिर से बसाया गया और कैंपबेल बे के पास ऊपरी पूर्वी तट पर राजीव नगर और न्यू चिंगेनह बस्तियों में भेज दिया गया। उस समय इनसे वादा किया गया था कि समय अनुकूल होने, मतलब सभी चीजें व्यवस्थित होने पर वे वापस अपनी जमीन पर आ जाएंगे।

अब सरकार यहां 'आपदा में अवसर' की कुत्सित योजना का खेल खेलने पर आमादा है। केन्द्र सरकार यहां 'ग्रेट निकोबार होलिस्टिक डेवलपमेंट प्रोजेक्ट' शुरू करने पर आमादा है। इसमें यहां दुनिया के सबसे व्यस्त माल परिवहन बंदरगाहों में से एक के रूप में परिकल्पना की गई है। इस परियोजना में एक ऐसा हवाई अड्डा शामिल है जो सबसे बड़े वाणिज्यिक विमानों को भी उतरने की सुविधा प्रदान करेगा, साथ ही 35 लाख की प्रारंभिक आबादी के लिए एक टाउनशिप, एक विद्युत संयंत्र और 'पर्यटक रिसॉर्ट्स' के लिए निर्धारित क्षेत्र भी शामिल हैं। इसकी लागत 92,000 करोड़ बताई गई है। बाहर से लाकर यहां की आबादी बढ़ाकर 6.5 लाख करने की योजना है। यही नहीं, यहां 130 वर्ग किलोमीटर का जंगल काटकर उसकी भरपाई हरियाणा या मध्य प्रदेश में पेड़ लगाकर की जाएगी।

पर्यावरण की चिंता को ध्यान में रखते हुए, नाजुक अंडमान और निकोबार द्वीप समूह के लिए यह परियोजना अकल्पनीय है। इस परियोजना में पर्यावरण संबंधी स्वीकृतियां को चुनौती देने वाली याचिकाएं राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण (एनजीटी) की एक पीठ के समक्ष लंबित हैं। पीठ ने पिछले साल नवंबर में अपना फैसला सुरक्षित रख लिया था। वन संबंधी स्वीकृतियों को कलकत्ता उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई है जहां इस मामले की अंतिम सुनवाई 30 मार्च से शुरू होने वाले सप्ताह में होगी।

यहां ग्रेट निकोबार जनजातीय परिषद बने हैं। समुदाय के कल्याण के लिए ये किसी भी आदिवासी समूह की चुनी हुई स्वशासित इकाइयां हैं। स्थानीय स्तर पर बहुतेरी आवाज उठाने के बावजूद न सुने जाने पर इन परिषदों के अध्यक्षों ने दिल्ली आकर मीडिया को बताया कि उनलोगों से द्वीप के पश्चिमी तट पर अपनी पुश्तैनी जमीनें छोड़ देने के प्रमाण-पत्रों पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा जा रहा है, ताकि ग्रेट निकोबार द्वीप परियोजना के विकास को अनुमति दी जा सके। जनजातीय परिषदों की तरफ से बरनबास मंजू ने बताया कि प्रशासन ने उनलोगों को 7 जनवरी को एक बैठक के लिए बुलाया और फिर द्वीप के विकास के समर्थन के रूप में दिखाने के लिए उन्हें सरेंडर प्रमाण-पत्रों पर हस्ताक्षर करने को कहा गया। ऐसा करने से वे 2022 से विरोध कर रहे हैं।

यहां धरती की सबसे पुरानी आदिवासी आबादी रहती है। द्वीप की आबादी मात्र करीब 8,000 है। 2004 में सुनामी आने पर इन्हें अस्थायी शिविरों और पुनर्वास बस्तियों में जगह दी गई थी। वे वापस अपने घरों में नहीं लौट पाए। अब यहां ऐसी परियोजना का प्रस्ताव है जिससे आबादी बढ़कर 6.5 लाख हो जाएगी

निकोबारी आदिवासियों के विरोध का सबसे बुनियादी और भावुक मुद्दा उनकी पैतृक भूमि है। निकोबारी जनजातीय परिषद का तर्क है कि दो दशकों से वे अपनी इन पैतृक जमीनों पर लौटने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। उनके लिए ये जमीनें केवल मिट्टी का टुकड़ा नहीं, बल्कि उनके पूर्वजों की समाधियां, उनके पवित्र नारियल के बागान और उनकी सांस्कृतिक विरासत हैं। परिषद का आरोप है कि उन्हें अपनी ही जमीन से हमेशा के लिए बेदखल करने की साजिश रची जा रही है। सरकार की नई योजना के तहत, इन्ही जमीनों पर अब 'कंटेनर टर्मिनल' और 'हवाई पट्टी' प्रस्तावित है।

जनजातीय परिषद ने स्पष्ट किया है कि सुनामी के बाद उन्हें केवल 'सुरक्षा' के लिए हटाया गया था, न कि उन्होंने अपनी जमीन का मालिकाना हक सरकार को सौंप दिया था। परिषद का कहना है कि प्रशासन यह भ्रम पैदा कर रहा है कि आदिवासी अपनी मर्जी से जमीन छोड़ रहे हैं, जबकि हकीकत में उन्हें डराया-धमकाया जा रहा है या विकास का झूठा लालच दिया जा रहा है।

प्रोजेक्ट का विरोध केन्द्र द्वारा लाया जा रहा ग्रेट निकोबार होलिस्टिक डेवलपमेंट प्रोजेक्ट जिसका निकोबारी आदिवासी विरोध कर रहे हैं

निकोबारी परिषद के विरोध का सबसे मजबूत कानूनी आधार 'अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वनाधिकारों की मान्यता) अधिनियम (पेसा कानून), 2006' है। इसके अनुसार, किसी भी विकास कार्य के लिए ग्राम सभा की 'स्वतंत्र, पूर्व और सूचित सहमति' अनिवार्य है। परिषद ने केन्द्रीय जनजातीय कार्य मंत्रालय को लिखे पत्रों में आरोप लगाया है कि प्रशासन ने फर्जी तरीके से यह रिपोर्ट दी कि आदिवासियों के अधिकारों का निपटारा कर दिया गया है।

हालांकि निकोबारी परिषद मुख्य रूप से निकोबारी समुदाय का प्रतिनिधित्व करती है, लेकिन वे 'शोम्पेन' जनजाति के अधिकारों के लिए भी सबसे मुखर आवाज बनकर उभरे हैं। शोम्पेन एक 'विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूह' है। शोम्पेन जनजाति बाहरी दुनिया से संपर्क नहीं रखती। परिषद का कहना है कि सरकार जिस 'होलिस्टिक डेवलपमेंट' की बात कर रही है, वह शोम्पेन के प्राकृतिक आवास को नष्ट कर देगा। इतनी बड़ी संख्या में बाहरी लोगों का आना शोम्पेन की संस्कृति और स्वास्थ्य के लिए 'सांस्कृतिक नरसंहार' जैसा होगा। आदिवासियों का यह भी कहना है कि परियोजना लागू होने के बाद वे अपने ही घरों में अल्पसंख्यक हो जाएंगे। इस वक्त द्वीप की आबादी लगभग 8,000 है जबकि परियोजना के तहत इसे बढ़ाकर 6.5 लाख करने की योजना है।

वैसे भी, यह विरोध सिर्फ जमीन या केवल पर्यावरण बचाने का नहीं है। यह पूरा मसला एक प्राचीन सभ्यता के अस्तित्व की पुकार है, यह उनकी पहचान, संस्कृति और कानूनी अधिकारों को बचाने की अंतिम लड़ाई है। केन्द्रीय पर्यावरण मंत्री भूपेन्द्र यादव को पिछले साल 27 अक्तूबर को लिखे सामूहिक पत्र में 70 विद्वानों, पर्यावरणविदों, पूर्व नौकरशाहों, एक्टिविस्ट और अधिवक्ताओं ने भी कहा था कि इस परियोजना से स्थानीय आबादी को ही नुकसान नहीं होगा, इस इलाके का कोमल इकोसिस्टम नष्ट हो जाएगा, जंगल काटे जाने से प्राचीन प्राकृतिक पर्यावास खत्म हो जाएगा और तरह-तरह के विशालकाय निर्माण से भूगर्भीय तनाव पर गंभीर असर होगा।

सरकार का हास्यास्पद तर्क है कि यहां 130 वर्ग किलोमीटर जंगल के 8.5 लाख से 1 करोड़ तक के जो पेड़ काटे जाएंगे, उसकी भरपाई हरियाणा या मध्य प्रदेश में पेड़ लगाकर की जाएगी। निकोबारी परिषद का कहना है कि निकोबार के वर्षावन वहां की प्रजातियों और समुदायों के साथ लाखों वर्षों के सह-अस्तित्व का परिणाम हैं। हरियाणा का जंगल निकोबार के आदिवासियों को न तो पंडानस का फल दे सकता है और न ही उनके पारंपरिक देवताओं का वास स्थान बन सकता है। सरकार इस परियोजना को चीन के बढ़ते प्रभाव को रोकने और हिन्द महासागर में भारत की शक्ति बढ़ाने के लिए 'अति-महत्वपूर्ण' मानती है। लेकिन जनजातीय परिषद का प्रश्न सीधा है कि क्या राष्ट्रीय सुरक्षा अपने ही नागरिकों के विनाश की कीमत पर हासिल की जानी चाहिए? परिषद ने सुझाव दिया है कि विकास की योजनाओं को उन क्षेत्रों तक सीमित रखा जाए जो जनजातीय रिजर्व से बाहर हैं जबकि मेगा-प्रोजेक्ट के वर्तमान डिजाइन में आदिवासियों के लिए कोई जगह नहीं छोड़ी गई है।

असली सवाल वही है कि विकास किस कीमत पर? ■

अपने गिरेबां में क्यों नहीं झांकता यूरोप?

यूरोप का 'नियम-आधारित अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था' का पवित्र मंत्र की तरह जाप हास्यास्पद है। वह खुद इसे कमजोर करने में भागीदार रहा

अशोक स्वैन

जब कनाडा के प्रधानमंत्री मार्क कार्नी ने दावोस में कहा कि नियम आधारित अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था खत्म हो रही है, तो यह सुर्खियों में छाई क्योंकि यह बात 'खेमे' के अंदर से आई थी। लेकिन असली झटका यह नहीं कि यह व्यवस्था खत्म हो रही है, बल्कि यह है कि पश्चिमी देश अब तक दिखावा करते रहे कि यह जिंदा है।

कार्नी की यह स्वीरोक्ति ऐसे समय आई है जब यूरोप ताजा-ताजा खुद को असुरक्षित महसूस कर रहा है। ग्रीनलैंड पर डॉनल्ड ट्रंप की धमकियों ने यूरोपीय नेताओं की नींद हराम कर दी है और अब वे अंतरराष्ट्रीय कानून के रखवाले की तरह पेश आ रहे हैं। अफगानिस्तान और इराक में अमेरिका के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ने वाला डेनमार्क खुद को एक इस्तेमाल होने वाले मोहरे की तरह महसूस कर रहा है। दशकों तक यह मानने वाला यूरोप कि अमेरिका हमेशा उसकी रक्षा करेगा, अब एक अलग अमेरिका को देख रहा है। ऐसा अमेरिका जो फायदे के लिए सहयोगियों का इस्तेमाल करता है।

यूरोपीय नेता 'नियम-आधारित अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था' को पवित्र मंत्र की तरह जप रहे हैं। लेकिन यूरोप जिस व्यवस्था का बचाव करने का दावा करता है, वह कभी नियम-आधारित रही ही नहीं; यह पश्चिमी देशों के नेतृत्व वाली थी और उसमें भी अक्सर वाशिंगटन के नेतृत्व वाली। तब यूरोप कोई मासूम दर्शक नहीं था। वह इसका भागीदार रहा, कभी पूरे मन से तो कभी अनमने ढंग से, लेकिन वह अपनी राहें जुदा करने को कभी तैयार नहीं था।

ये जो 'नियम आधारित अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था' की बात है, वह सुनने में तो निष्पक्ष लगती है, लेकिन है नहीं। यह व्यवस्था कभी भी पूरी तरह नियमसम्मत नहीं रही। यह दुनिया को उन लोगों की सुविधानुसार ढालने का जरिया रही जो नियमों को बनाए रखने का दावा करते थे।

शीत युद्ध के बाद के दौर ने इस तनाव को स्थायी बना दिया। सोवियत संघ के खत्म होने के बाद, अमेरिका को चुनौती देने वाला कोई नहीं था। यह अंतरराष्ट्रीय कानून को मजबूत करने और संयुक्त राष्ट्र को सशक्त बनाने का सही समय होना चाहिए था। इसके बजाय, वाशिंगटन ने वैश्विक नियमों को तेजी से वैकल्पिक मानना शुरू कर दिया और उसके यूरोपीय सहयोगियों ने ताल से ताल मिलाते हुए अपनी नैतिक भाषा बदल ली।

1990 के दशक की शुरुआत एक साफ संकेत के साथ हुई। पनामा में, अमेरिका ने मनमर्जी तरीके से संप्रभुता निलंबित करने और विदेशी नेताओं को पकड़ने का अपना अधिकार जताया। इसे कानूनी जामे में पेश किया गया, लेकिन असली बात तो ताकत की थी। एक बार जब मामला ठंडा पड़ गया तो इसे दूसरी जगहों पर भी लागू किया गया।

फिर आई अफगानिस्तान की बारी। 9/11 के खिलाफ शुरुआती प्रतिक्रिया को व्यापक सहानुभूति मिली। लेकिन इसके बाद जो हुआ, वह आत्मरक्षा नहीं था। यह बीस साल का कब्जा बन गया। नाटो सहयोगियों ने अफगानिस्तान को साझा पश्चिमी प्रोजेक्ट बना दिया। इराक ज्यादा विनाशकारी था। कमजोर कानूनी आधार और व्यापक विनाश के हथियारों का औचित्य धाराशायी होने के बावजूद, पश्चिमी सहयोगी 2003 के हमले में शामिल हुए और इराक तबाह हो गया। लीबिया में भी ऐसा ही हुआ। दखल को आम लोगों की रक्षा के तौर पर पेश किया गया, लेकिन यह शासन पलटने में बदल गया। यूरोप को बंदूक की नोक पर तो इसमें घसीटा नहीं गया था; ब्रिटेन और फ्रांस इसमें पूरी सक्रियता से शामिल थे। मानवीय जिम्मेदारी की भाषा एक बार फिर एक सरकार को पलटने का हथियार बनी।

सीरिया इसका एक कहीं खतरनाक उदाहरण था। बाहरी ताकतों ने हथियारबंद लोगों की मदद की, गृह युद्ध में पलीता लगाया, और सीरिया को छद्म युद्ध का मैदान बना दिया। इसके नतीजा सीरियाई लोगों के लिए बहुत बुरा और पूरे इलाके को अस्थिर करने वाला था। जब शरणार्थियों के आने से यूरोप को मुश्किल हुई, तो उसने ऐसा स्वांग किया मानो यह संकट मानव निर्मित था ही नहीं।

यूक्रेन मामले में तो असलियत और साफ है। 2014 के बाद, यूक्रेन में अमेरिकी इंटेलिजेंस दखलअंदाजी जानकारी साझा करने से बढ़कर गहरी सुरक्षा और राजनीतिक उलझाव तक पहुंच गई। संप्रभुता के प्रति पश्चिमी देशों की प्रतिबद्धता हमेशा ही चुनिंदा रही है। कुछ देशों को पूर्णतः संप्रभु माना जाता है, जबकि अन्य को ऐसा क्षेत्र जहां बाहरी ताकतें हस्तक्षेप कर सकती हैं। इसराइल के मामले में यह चयनात्मकता स्पष्ट है। दशकों से, फिलिस्तीनी क्षेत्र पर इसराइली कब्जे को अपवाद के रूप में देखा जाता रहा। अंतरराष्ट्रीय कानून का सहारा सुविधानुसार लिया जाता है और नुकसान होने पर उसे नरम कर दिया जाता है। नागरिकों की पीड़ा को चिंता जताने के दिखावे के जरिये सामान्य बना दिया जाता है, जिससे जवाबदेही तय नहीं होती। जब इसराइल सैन्य कार्रवाई तेज करता है और बड़े पैमाने पर नरसंहार करता है, तो पश्चिमी देशों की प्रतिक्रिया अक्सर सार्वभौमिक मानकों को लागू करने के बजाय औचित्य साबित करने की होती है।

वेनेजुएला ने इस पाखंड को सिरे से उजागर कर दिया। अमेरिकी सेना ने काराकास के आसपास के ठिकानों पर हमला किया, जो तख्तापलट जैसा ऑपरेशन था। सेना राष्ट्रपति निकोलस मादुरो और उनकी पत्नी को अमेरिका में मुकदमा चलाने के लिए पकड़कर ले गई। इसके जवाब में संप्रभुता के बारे में बड़ी-बड़ी बातें करने वाले पश्चिमी सहयोगियों ने चुप्पी साध ली।

अगर नियम-आधारित व्यवस्था का कोई मतलब है, तो इसे ताकतवर देशों का किसी देश की राजधानी पर बमबारी करने, किसी मौजूदा राष्ट्राध्यक्ष का अपहरण करने और किसी दूसरे देश में सत्तापलट का टिकट नहीं माना जा सकता। सच तो यह है कि यूरोप की विरोध करने में विफलता ने उस व्यवस्था को नष्ट करने में मदद की जिसका वह समर्थन करने का दावा करता है।

इसका मतलब यह नहीं है कि पश्चिमी देश ही सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचाने वाले हैं या गैर-पश्चिमी ताकतें कानून की रखवाली करती हैं। रूस का यूक्रेन पर हमला, चीन का ताइवान को डराना, और दुनिया के कई हिस्सों में, जिसमें भारत भी शामिल है, सत्तावादी और सांप्रदायिक नेताओं द्वारा लोकतंत्र और मानवाधिकारों पर हमला इस कल्पना को नामुमकिन बना देते हैं। बात इससे भी ज्यादा सीधी और गंभीर है: पश्चिम ने एक ऐसा नैरेटिव गढ़ा जहां उसने नियमों और कानून का प्रतिनिधित्व करने का दावा किया, जबकि बार-बार ऐसा व्यवहार किया जैसे ताकत उसे अपवादों का हक देती है।

यही वजह है कि ग्रीनलैंड को लेकर यूरोप की चिंता सामने आ रही है। सालों तक, यूरोपीय नेता एक ऐसी दुनिया के भागीदार रहे जिसमें अमेरिका असलियत को बदल सकता था, सरकारों को गिरा सकता था, दूसरों को सीमा पारकर सजा दे सकता था और इसके बाद भी वे दावा कर सकते थे कि वे अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था की रक्षा कर रहे हैं। अब, दशकों में पहली बार यूरोप को यह डर सता रहा है कि उसके साथ भी वैसा ही बर्ताव किया जा सकता है। अब उसे पता चल रहा है कि साम्राज्य के प्रति वफादारी साम्राज्य से सुरक्षा की गारंटी नहीं देती।

कार्नी का संदेश इसलिए खास है क्योंकि वह उसी बात की पुष्टि कर रहे हैं जिसे बाहरी लोग लंबे समय से कहते आ रहे हैं। वैश्विक व्यवस्था को सार्वभौमिक बताया गया, लेकिन यह पश्चिमी देशों के फायदे के लिए काम करती थी। यह मुक्त बाजार, लोकतंत्र और मानवाधिकारों की बात करती था, जबकि कब्जे, प्रतिबंधों और युद्धों को बढ़ावा देती थी।

अब यूरोप नियम-आधारित व्यवस्था को बचाने की बात करता है, जैसे कि ट्रंप के आने तक सब कुछ एकदम सही था। लेकिन ट्रंप कोई परग्रही समस्या नहीं; वह अमेरिकी राजनीतिक व्यवस्था से ही निकले हैं। बात बस इतनी है कि बहुपक्षवाद के प्रति उनकी नफरत कुछ ज्यादा बेबाक और नफा-नुकसान वाली है। इसके पीछे का तर्क पुराना है: अमेरिकी वर्चस्व पहले, अंतरराष्ट्रीय कायदे-कानून बाद में। अगर यूरोप इस व्यवस्था के खात्मे के लिए किसी को दोष देता है, तो उसे सबसे पहले आईना देखना चाहिए। दशकों तक, यूरोपीय नेताओं ने आजादी के बजाय गठबंधन को चुना, अमेरिकी सुरक्षा छाते के आराम को चुना और नैतिक जिम्मेदारी दूसरों पर डाली। उन्होंने कानूनी तौर पर संदिग्ध युद्धों में हिस्सा लिया, ऐसे कब्जों को बर्दाश्त किया जिनकी वे सैद्धांतिक रूप से निंदा करते थे, और एक ऐसी व्यवस्था को सही ठहराया जहां अंतरराष्ट्रीय कानून असमान रूप से लागू होता था।

यूरोप अब भी वैश्विक नियमों को जिंदा करने में सकारात्मक भूमिका निभा सकता है। इसके लिए मानना होगा कि नियम तब भी लागू होते हैं जब उल्लंघन करने वाला दोस्त और मददगार हो। उसे अंतरराष्ट्रीय कानून को दुश्मनों के खिलाफ हथियार और सहयोगियों के लिए ढाल की तरह इस्तेमाल करना बंद करना होगा।

नियम-आधारित व्यवस्था का खत्म होना डेनमार्क को ट्रंप की धमकियों से शुरू नहीं हुआ। यह उस पल शुरू हुआ जब पश्चिम ने तय किया कि नियम दूसरों के लिए हैं। ■

अशोक स्वैन स्वीडन की उप्साला यूनिवर्सिटी में पीस एंड कॉन्फ्लिक्ट रिसर्च के प्रोफेसर हैं।

फोटो: गेटी इमेजेज

चकरघिन्नी अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप के ग्रीनलैंड पर दावे को लेकर कनाडा के प्रधानमंत्री मार्क कार्नी (इनसेट) की टिप्पणियों ने यूरोप को आईना ही दिखाया है

> 'नियम आधारित अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था' सुनने में तो निष्पक्ष लगती है, लेकिन है नहीं। यह कभी नियमसम्मत नहीं रही। यह दुनिया को उन लोगों की सुविधानुसार ढालने का जरिया रही जो नियमों को बनाए रखने का दावा करते थे

फोटो: गेटी इमेजेज

सेकुलरवाद भारत गणराज्य के स्वधर्म का मूल सूत्र

सर्वधर्मसमभाव भारत देश को बचाए रखने की अनिवार्य शर्त है

योगेन्द्र यादव

भारत गणराज्य की स्थापना छिहत्तर वर्ष पहले हुई थी, लेकिन उसके स्वधर्म की बुनियाद कोई तीन हजार साल पहले पड़ चुकी थी। आज का भारत गणराज्य "भारतवर्ष", "हिन्दुस्तान" और "इंडिया" की धाराओं का त्रिवेणी संगम है। भारतीय सभ्यता की इस यात्रा के हर पड़ाव के अवशेष हमारे सामुदायिक अवचेतन में मौजूद हैं। इसलिए भारत गणराज्य का स्वधर्म जड़ और शाश्वत नहीं है। वह भीतरी और बाहरी दोनों किस्म की गतिशीलता से प्रवाहित होता है। हमारा स्वधर्म प्रवाहमान है।

इसलिए भारत के स्वधर्म की तलाश प्राचीन भारत के किसी सनातन मूल्यों में नहीं की जा सकती। भारत का स्वधर्म सिर्फ औपचारिक दस्तावेजों, लिखित आदर्शों, स्थापित विचारधाराओं की भाषा या संस्थागत धार्मिक पोथियों में नहीं, बल्कि आंदोलनों की भाषा में मिलेगा। सबसे पहले बौद्ध और जैन धर्मदर्शन, फिर सूफी और भक्ति परंपरा और आधुनिक युग में राष्ट्रीय आंदोलन ने स्थापित सत्ता को चुनौती दी, सभ्यता के मूल्य बोध को खंगाला और जनमानस को उद्वेलित कर स्वधर्म को पुनःपरिभाषित किया। इन धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक आंदोलनों को समझ कर हम मोटे तौर पर चार सूत्र चिन्हित कर सकते हैं जो भारत गणराज्य के स्वधर्म को परिभाषित करते हैं। इस और आगामी तीन आलेखों में इन चारों सूत्रों की व्याख्या की जाएगी।

स्वधर्म का पहला सूत्र मैत्री से शुरू होकर सुलह-ए-कुल के विचार से गुजरते हुए आधुनिक सेकुलरवाद या सर्वधर्मसमभाव की अवधारणा तक पहुंचता है। सेकुलरवाद की समकालीन बहस में अक्सर दोनों पक्ष मानकर चलते हैं कि पंथ निरपेक्षता एक नया विचार है। एक नई समस्या का नया समाधान। लेकिन भारतीय सभ्यता के नजरिये से देखें तो ना यह समस्या नई है, और ना ही उसका यह निदान नया है। विविध मत, पंथ, संप्रदाय, सिलसिले का सह अस्तित्व भारतीय सभ्यता के विशिष्ट लक्षणों में से एक रहा है। इसलिए यहां समाज और सरकार दोनों तरफ से इस सह-अस्तित्व को महज एक अवस्था या मजबूरी की बजाय एक आदर्श के रूप में विकसित करने के प्रयास भी शुरू से हुए हैं। मैत्री की अवधारणा शुरू से ही हमारी सभ्यता के स्वधर्म को निरूपित करती रही है।

मैत्री को अक्सर सम्राट अशोक या फिर गौतम बुद्ध से जोड़कर देखा जाता है। यह सही भी है। लेकिन बौद्ध दर्शन ने एक पूर्ववर्ती विचार को विकसित किया था। ऋग्वेद में मित्र देवता संधि, समन्वय और सौहार्द के प्रतीक हैं। छान्दोग्य उपनिषद् में मित्र सामंजस्य का द्योतक बनते हैं। इसका विस्तार करते हुए गौतम बुद्ध मैत्री (पाली में 'मेत्ता') को एक आदर्श के रूप में स्थापित करते हैं, चार ब्रह्मविहार में से एक। मैत्री अद्वेष और समभाव की मनःस्थिति है। सम्राट अशोक के शिलालेखों ने मैत्री को एक सामाजिक और राजनीतिक आदर्श के रूप में स्थापित किया। अद्वेष, अहिंसा और स्नेह के विचार को अशोक ने सांप्रदायिक सद्भाव से जोड़ा। स्वयं बौद्ध होते हुए भी अशोक के शिलालेख सभी श्रमण (विविध बौद्ध निकाय, जैन, आजीविका और अन्य सधुक्कड़ संप्रदाय) और ब्राह्मण (वैदिक धर्म का पालन करने वाले) मत का सम्मान करने का निर्देश देते हैं। सर्वधर्मसमभाव को शासकीय नीति और संयम को सामाजिक आदर्श के रूप में स्थापित कर अशोक ने उस विचार की नींव डाली जिसे आज हम पंथ निरपेक्षता कहते हैं।

अकबर की सुलह-ए-कुल की नीति ने सर्वधर्मसमभाव की उस नीति का विस्तार किया जिसकी बुनियाद अशोक ने डाली थी। बादशाह का धार्मिक रुझान जो भी हो, प्रजा को अपनी धार्मिक मान्यता, उपासना और रस्मों-रिवाज की पूरी छूट होगी। जबरन धर्म-परिवर्तन नहीं होगा। राज्य की तरफ से धार्मिक मामलों, संस्थाओं और अनुष्ठान में कोई दखलंदाजी नहीं होगी। प्रशासनिक नियम और कानून किसी एक मजहब के नहीं होंगे। किसी भी पंथ, संप्रदाय और मजहब के साथ भेदभाव नहीं होगा। और राज्य सभी धार्मिक स्थलों और संस्थाओं को प्रश्रय और अनुदान देगा। जाहिर है, अकबर की नीति आधुनिक अर्थ में सेकुलर नहीं थी, हो नहीं सकती थी। मुद्दे की बात यह है कि अकबर ने भारत के स्वधर्म को पहचान लिया था।

हमारे संविधान की पंथ निरपेक्षता अशोक और अकबर की नीति का विस्तार भर है। समकालीन भारत में 'सेकुलर' का इसी अर्थ में इस्तेमाल होता है। 'सेकुलरवाद' और 'धर्मनिरपेक्षता' का सामान्य मतलब है सभी धर्म-संप्रदायों को एक नजर से देखना और किसी एक संप्रदाय के वर्चस्व का विरोध करना। लेकिन शब्दों के इतिहास और उनके निहितार्थ देखें तो इस नीति को समझने के लिए न तो 'धर्मनिरपेक्षता' सही शब्द है और न ही यूरोपीय अर्थ में 'सेकुलरवाद'। चूंकि हमारे यहां धर्म का मतलब 'रिलिजन' नहीं रहा है, इसलिए 'धर्मनिरपेक्षता' बिना वजह समाज के नैतिक मूल्यों के प्रति उदासीनता का संदेश देती है। इस लिहाज से संविधान के आधिकारिक हिन्दी पाठ में इस्तेमाल 'पंथ निरपेक्षता' बेहतर शब्द है। इसी प्रकार 'सेकुलरवाद' बिना वजह हमारी बातचीत में उस यूरोपीय संदर्भ को घसीट लाती है जिसका हमारी समस्या और उसके निदान से कोई लेना-देना नहीं है। हमारी समस्या चर्च-राज्य संबंध की नहीं है। हमें किसी पोप, ख़लीफ़ा या धर्मगुरुओं के राज का खतरा नहीं है। इसलिए यूरोपीय काट के अनीश्वरवादी या सभी धार्मिक मामलों के प्रति आंख मूंदने वाले सेकुलर निज़ाम की हमें कोई जरूरत नहीं है। शब्द जो भी हों, हमारी चुनौती कमोबेश वही है जो अशोक और अकबर की थी। हमारी चुनौती है अलग-अलग मत और धर्मावलंबियों के बीच समभाव स्थापित करना तथा वर्चस्ववाद, घृणा और हिंसा को रोकना। यह दोनों पुरानी चुनौतियां थी, लेकिन आधुनिक संदर्भ में तीखी हो गई हैं। साथ ही नए जमाने की नई चुनौतियां भी जुड़ गई हैं। अब राज्य को धार्मिक संस्थाओं का नियमन करना भी जरूर है। साथ ही समकालीन राज्य धार्मिक समुदाय में अंदरूनी कुरीतियों के सुधार करने की जिम्मेदारी से भी कंधा नहीं मोड़ सकता।

इस चुनौती का मुकाबला करने के लिए हमें मैत्री और सुलह-ए-कुल के रास्ते पर चलते हुए सर्वधर्मसमभाव को परिभाषित करना होगा। यह एक ऐसी देशज दृष्टि है जो धार्मिकता का सम्मान करती है। यह दृष्टि धर्म के प्रति निरपेक्ष नहीं है, चूंकि धर्म नैतिकता का स्रोत है। लेकिन यह किसी भी पंथ या संप्रदाय के प्रति निरपेक्ष या निष्पक्ष है। मैत्री भाव से उपजी यह दृष्टि सभी धार्मिक समुदायों के प्रति समभाव रखती है। धार्मिक विचार और व्यवहार की विविधता हमारी सभ्यता की विरासत है। इसलिए राज्य सत्ता का दायित्व धार्मिक आचार-व्यवहार को रोकना नहीं है, बल्कि धार्मिक वर्चस्व को रोकना है। विविध संप्रदायों में आपसी विश्वास और सम्मान का रिश्ता बनाना और जहां जरूरत हो वहां धार्मिक समुदाय के भीतर शोषण को रोकना भी है।

इस स्वधर्म के अनुरूप बना है भारतीय संविधान। संविधान की प्रस्तावना में "सेकुलरिज्म" कब और क्यों डाला गया, यह बहस निरर्थक है। सच यह है कि मूल संविधान की बुनियादी व्यवस्था सर्वधर्मसमभाव के अनुरूप थी। इस अर्थ में सर्वधर्मसमभाव केवल एक संवैधानिक प्रावधान नहीं है। यह केवल एक समझदार नीति नहीं है। यह हमारी सभ्यता के मूलभूत मूल्यों में से एक है। यह भारत देश को बचाए रखने की अनिवार्य शर्त है — या तो भारत सर्वधर्मसमभाव के रास्ते पर रहेगा, या फिर भारत रहेगा ही नहीं। यह भारत गणराज्य के स्वधर्म का पहला सूत्र है। ■

> संविधान की प्रस्तावना में 'सेकुलरिज्म' कब और क्यों डाला गया, यह बहस निरर्थक है। सच यह है कि मूल संविधान की बुनियादी व्यवस्था सर्वधर्मसमभाव के अनुरूप थी। यह हमारी सभ्यता के मूलभूत मूल्यों में से एक है

योगेन्द्र यादव की नई पुस्तक "गणराज्य का स्वधर्म" (सेतु प्रकाशन) से उद्धृत और संपादित अंश।

आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ते हिमाचल के सशक्त कदम

ठाकुर सुखविन्द्र सिंह सुक्खू
मुख्यमंत्री

हिमाचल प्रदेश के 56वें पूर्ण राज्यत्व दिवस की सभी प्रदेशवासियों को हार्दिक शुभकामनाएं। आज ही के दिन 1971 में प्रदेश के मेहनतकश और ईमानदार लोगों के मजबूत हौसलों और निरंतर प्रयासों से हिमाचल प्रदेश देश का 18वां राज्य बना।

पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गांधी के अहम योगदान के कारण ही हिमाचल को पूर्ण राज्य का दर्जा प्राप्त हुआ था। भारी बर्फबारी के मध्य ऐतिहासिक रिज मैदान से उन्होंने हिमाचल के पूर्ण राज्यत्व की घोषणा की थी। हिमाचल को पूर्ण राज्य का दर्जा दिलवाने में जिन अनगिन विभूतियों ने अपना बहुमूल्य योगदान दिया, उनमें हिमाचल निर्माता और प्रथम मुख्यमंत्री डॉ. यशवन्त सिंह परमार की भूमिका उल्लेखनीय रही है। नाम मात्र संसाधनों के साथ अपनी विकास यात्रा शुरू करने वाला यह पहाड़ी राज्य आज जिस मकाम पर पहुंचा है, उसमें डॉ. परमार का योगदान हम सभी के लिए प्रेरणादायक है, जिसे हमेशा गौरव और सम्मान के साथ याद किया जाएगा।

आज के इस शुभ अवसर पर मैं उन्हें नमन करता हूं। आप सभी के प्रयासों से प्रेरित होकर हमने तीन वर्ष पूर्व हिमाचल को जिन नई ऊंचाइयों पर ले जाने का संकल्प लिया था, उसी की बदौलत व्यवस्था परिवर्तन करते हुए हमने कई अहम फैसले लिए। आज तमाम मुश्किलों के बावजूद हम आत्मनिर्भरता, समृद्धि और खुशहाली की ओर दृढ़ता से कदम बढ़ा रहे हैं।

हमारी सरकार ने आपके आशीर्वाद से 11 दिसंबर 2022 को आपकी सेवा का बीड़ा उठाया था। हाल ही में हमारी सरकार ने अपने सेवाकाल के तीन साल पूरे किए हैं, जो प्रदेश के विकास और प्रदेश के सभी वर्गों के लोगों के कल्याण के लिए समर्पित रहे हैं। पहले दिन से ही हमने जनसेवा को सरकार का मूल मंत्र बनाया और इसी भावना के साथ हम हिमाचल प्रदेश को आत्मनिर्भर और समृद्धशाली राज्य बनाने के लिए दिन-रात मेहनत कर रहे हैं। सरकार लोगों के हित में नई नीतियां और योजनाएं लेकर आ रही है। प्रदेश के हित को सबसे ऊपर रखते हुए हम कड़े फैसले लेने से भी पीछे नहीं हटे, जिनके अब सुखदायी नतीजे आना शुरू हो चुके हैं। विधानसभा चुनाव में आपसे किए वायदे के मुताबिक हमने दस में से सात गारंटियों को पूरा कर लिया है। प्रदेश के 1 लाख 36 हजार कर्मचारियों को पहली कैबिनेट बैठक में ओपीएस प्रदान करते हुए सेवानिवृत्त कर्मचारियों को आर्थिक सुरक्षा और सम्मान प्रदान किया गया है।

हमारी सरकार बनने के बाद केन्द्र सरकार ने हिमाचल को मिलने वाली ग्रांट में भारी कटौती की है। वर्ष 2021-22 में राजस्व घाटा अनुदान 10,249 करोड़ रुपये था, जो 2025-26 में घटकर 3,256 करोड़ तक सीमित कर दिया गया। इस चुनौती को स्वीकार करते हुए हमने आर्थिक स्थिति को मजबूत करने के लिए नए संसाधनों के सृजन पर बल दिया। परंतु संसाधनों के सही इस्तेमाल से राज्य को पिछले तीन वर्षों में 26,683 करोड़ रुपये राजस्व की प्राप्ति हुई, जो पूर्व सरकार की इस अवधि की तुलना में 3,800 करोड़ रुपये अधिक है।

सरकार का मानना है कि प्रदेश के संसाधनों पर सभी वर्गों का एक समान हक है। हम प्रदेश की संपदा की रक्षा करने के लिए वचनबद्ध हैं और हम उन्हें कभी बिकने नहीं देंगे। हमारी सरकार ने प्रदेश में व्यवस्था परिवर्तन का बड़ा अभियान शुरू किया है। इस अभियान का मुख्य आधार है कि हम प्रदेश की सम्पदा को लुटने नहीं देंगे।

शिमला में वाइल्ड फ्लावर हॉल के लिए हमने लंबी कानूनी लड़ाई लड़ी और इस संपत्ति को न सिर्फ वापस लिया बल्कि पिछले सारे पैसे भी वापस लिए। हम अब इसे ग्लोबल टेंडर के माध्यम से इसके लिए निविदाएं आमंत्रित कर रहे हैं ताकि प्रदेश को करोड़ों रुपये का राजस्व प्राप्त हो। इसी तरह जल विद्युत क्षेत्र में निजी कंपनियों ने प्रदेश सरकार को बढ़ी हुई रॉयल्टी देने से मना किया और हाई कोर्ट में केस कर दिए। हमने इन केस को जीता और करोड़ों रुपये इन कंपनियों से वापस लिए और मुफ्त बिजली को भी प्रदेश के लिए बढ़ी हुई दर पर लेना शुरू किया है। भाखड़ा ब्यास और पौंग बांध के बकाया जो कि उच्चतम न्यायालय के वर्ष 2011 के आदेश के बाद भी हमें नहीं मिले थे, हमने इन्हें वापस लेने के लिए उच्चतम न्यायालय में लड़ाई जारी रखी है जो अंतिम चरण में है। इतना ही नहीं हिमाचल प्रदेश ने स्पष्ट कर दिया है कि हम ऐसी नई परियोजनाएं, जिनमें हमारे पड़ोसी राज्य शामिल होंगे, तभी आगे बढ़ेंगे जब हिमाचल के हित सुरक्षित रखे जाएंगे।

हमने एसजेवीएनएल और एनएचपीसी से ऐसे जलविद्युत परियोजनाएं लेने की प्रक्रिया शुरू कर दी है, जिनमें हिमाचल के हितों की अनदेखी की गई। हम लूहरी-सुन्नी और धौलासिद्ध परियोजनाओं को सरकार के नियंत्रण में लेने जा रहे हैं। पंजाब के साथ शानन जल विद्युत् परियोजना की लीज समाप्त होने के बाद हमने केन्द्र एवं पंजाब सरकार से इस परियोजना को हिमाचल को सौंपने की मांग की है। हमारी सरकार के प्रयासों से कड़छम-वांगतू परियोजना में प्रदेश को मिलने वाली रायल्टी 12 से बढ़कर 18 प्रतिशत हुई है, जिससे सालाना 150 करोड़ रुपये की अतिरिक्त आय होगी।

हमने केन्द्र से राजस्व घाटा अनुदान और ग्रीन बोनस सहित तमाम मांगों को प्रमुखता से रखा है। केन्द्र से शानन परियोजना और चंबा जिला की बैरा सियूल जल विद्युत् परियोजना राज्य को लौटाने की मांग की गई है।

हम चाहते हैं कि गांव का पैसा गांव में ही रहे और लोगों को रोजगार के लिए शहरों की ओर पलायन न करना पड़े। इसीलिए हमने व्यापक सुधार और व्यवस्था परिवर्तन शुरू किया गया है। हमने राजीव गांधी वन संवर्धन योजना, मुख्यमंत्री वन विस्तार योजना, हिमईरा, महात्मा गांधी रोजगार गारंटी योजना- मनरेगा, मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजना, होम-स्टे योजना और अन्य योजनाओं के माध्यम से गांव में आर्थिक बदलाव की शुरुआत की है। जंगलों के संरक्षण में सामुदायिक भागीदारी बढ़ाने के लिए 100 करोड़ रुपये लागत की राजीव गांधी वन संवर्धन योजना शुरू की गई है। इसमें महिला एवं युवक मंडलों, स्वयं सहायता समूहों को नए जंगल उगाने और इनके संरक्षण के लिए आर्थिक सहायता दी जा रही है। हमने हिमाचल को समृद्ध और संपन्न बनाने का लक्ष्य रखा है। इसे हम चरणबद्ध तरीके से पूरा करेंगे। हमने ग्रामीण महिलाओं को पात्रता के आधार पर 1500 रुपये महीना देने का काम चरणबद्ध तरीके से शुरू कर दिया है। हम अपनी इस चुनावी गारंटी को अगले एक वर्ष में पूरे हिमाचल में लागू कर देंगे। इससे भी ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी बढ़ेगी। हिमाचल में व्यवस्था परिवर्तन का दूसरा आधार है, मजबूत अर्थव्यवस्था। जब तक प्रदेश अपने पैरों पर खड़ा नहीं होगा तब तक हिमाचल अपने हक की लड़ाई भी नहीं लड़ सकेगा। इसके लिए हमने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने का अभियान शुरू किया है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था तभी मजबूत होगी जब युवाओं को गांव-घर के पास सम्मानजनक स्व-रोजगार प्राप्त होगा। इसके लिए हमने एक प्रभावी ईको-सिस्टम बनाना शुरू किया है। अपने वायदे के मुताबिक हमारी सरकार ने पशुपालकों से गाय और भैंस के दूध के खरीद मूल्य में ऐतिहासिक वृद्धि की है। गाय के दूध पर समर्थन मूल्य 32 से बढ़ाकर 51 रुपये प्रति लीटर तथा भैंस के दूध पर 47 से 61 रुपये प्रति लीटर किया गया है। इस पहल से हिमाचल दूध खरीद पर सबसे ज्यादा समर्थन मूल्य देने वाला देश का पहला राज्य बन गया है। कांगड़ा में ढगवार में 201 करोड़ रुपये की लागत से विश्वस्तरीय दूध प्रसंस्करण संयंत्र स्थापित किया जा रहा है। मंडी और रामपुर में दूध की प्रसंस्करण क्षमता को दो गुणा बढ़ा दिया गया है। ऊना, कुल्लू, हमीरपुर और कांगड़ा में दूध की चिलिंग और प्रसंस्करण की व्यवस्था मजबूत की जा रही है। हम जल्द ही हिमाचल को दूध, घी, पनीर और दूध उत्पादों में आत्मनिर्भर बना देंगे जिसका सीधा लाभ गांव-गांव में पशु पालन कर रहे किसान परिवारों को होगा। प्रदेश सरकार ने भेड़-बकरी पालकों के हितों की सुरक्षा के लिए और उनकी अर्थव्यवस्था को सुधारने के लिए 295 करोड़ रुपये की नई योजना बनाई है।

हमने 680 करोड़ रुपये की राजीव गांधी स्टार्ट-अप योजना शुरू की है। 50 प्रतिशत सब्सिडी पर ई-टैक्सी दी जा रही है। 100 केवी से 2 मेगावाट के सौर संयंत्र लगाने के लिए ब्याज पर सब्सिडी दी जा रही है। यह सब्सिडी जनजातीय क्षेत्रों में 5 प्रतिशत और अन्य क्षेत्रों के लिए 4 प्रतिशत है। हमारी सरकार ने हिमाचल प्रदेश को हरित ऊर्जा राज्य बनाने का लक्ष्य तय किया है। इसी उद्देश्य से प्रदेश में छह ग्रीन कॉरीडोर और सभी जिलों में 90 स्थानों पर ईवी चार्जिंग स्टेशन स्थापित किए गए हैं। हम अगले दो वर्षों में 500 मेगावाट सौर ऊर्जा परियोजनाएं स्थापित करने की दिशा में काम कर रहे हैं। ग्रीन पंचायत कार्यक्रम के तहत सभी ग्राम पंचायतों में 500 किलोवॉट सौर ऊर्जा परियोजनाएं स्थापित करने का निर्णय लिया गया है। हमने जियो थर्मल पॉलिसी को मंजूरी दी है ताकि प्रदेश में जियो थर्मल ऊर्जा संसाधनों की खोज और इनके दोहन को बढ़ावा मिल सके।

मैं स्वयं किसान का बेटा हूं और किसानों, बागवानों और पशुपालकों के संघर्षों को करीब से देखा और अनुभव किया है। इसलिए हमारी सरकार की प्राथमिकता किसान के हाथ में सीधे तौर पर पैसा पहुंचाना है। प्रदेश की आर्थिकी में बागवानी के बड़े योगदान को देखते हुए हमने बागवानी नीति लागू करने का फैसला किया है और ऐसा करने वाला हिमाचल देश का पहला राज्य बनने जा रहा है। इससे प्रदेश के 82 हजार 500 लोगों को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे। केन्द्र सरकार की किसान विरोधी नीतियों से हमारे किसानों, बागवानों और समाज के कमजोर और गरीब वर्गों पर अत्याधिक ज्यादतियां हो रही हैं। कड़े संघर्ष के बाद केन्द्र सरकार को अपने पारित किसान विरोधी काले कानूनों को वापस लेने पर मजबूर होना पड़ा था। आज किसानों और बागवानों में केन्द्र की किसान विरोधी नीतियों पर बड़ा आक्रोश है। उनका मानना है देश में मिलने वाली कीटनाशक, खाद और स्प्रे इत्यादि की गुणवत्ता घटिया है और ये सब उन्हें ऊंचे दामों पर बेची जा रही हैं। इन दवाइयों से बागानों में बेमौसमी पतझड़ हो रही है और पौधों को कई प्रकार की गंभीर बीमारियों का सामना करना पड़ रहा है। हमारे किसानों और बागवानों को इसका सीधा खामियाजा भुगतना पड़ रहा है। मैंने न्यूजीलैंड से आयात होने वाले सेब की आयात शुल्क घटाने का मुद्दा भी केन्द्र सरकार से उठाया है। हम सेब बागवानों के हितों को पुरजोर तरीके से हर मंच पर उठाएंगे।

हमने सेब के लिए युनिवर्सल कार्टन के इस्तेमाल को कानूनी रूप से अनिवार्य बनाया है, जिससे आज हजारों सेब उत्पादकों को अपनी फसल के बेहतर दाम मिल रहे हैं। हिमाचल प्रदेश देश का पहला राज्य है जहां प्राकृतिक कृषि से उत्पन्न गेहूं, मक्की और हल्दी के लिए समर्थन मूल्य दिया गया है। हमने हल्दी का समर्थन मूल्य 90 रुपये प्रति किलो घोषित किया है। हमने गेहूं का समर्थन मूल्य 60 रुपये प्रति किलो घोषित किया है। हमने मक्की का समर्थन मूल्य 40 रुपये प्रति किलो घोषित किया है। चंबा जिला के पांगी घाटी को प्रदेश का पहला प्राकृतिक खेती उपमंडल बनाया गया है। घाटी के किसानों से प्राकृतिक रूप से उगाई जा रही जौ को 60 रुपये प्रति किलो ग्राम के समर्थन मूल्य पर खरीदा जा रहा है। गोबर खरीद योजना के तहत प्रदेश सरकार पशुपालकों से 300 रुपये प्रति क्विंटल की दर से जैविक खाद और वर्मी कंपोस्ट की खरीद कर रही है। यह योजना भी हमारी चुनावी गारंटी का हिस्सा थी।

हाल ही में केन्द्र सरकार द्वारा मनरेगा योजना को समाप्त कर इस वर्ग पर एक और कुठाराघात किया है, जबकि हिमाचल प्रदेश सरकार ने मनरेगा दिहाड़ी में ऐतिहासिक वृद्धि की और इसे 247 रुपये बढ़ाकर 320 रुपये किया। लेकिन केन्द्र सरकार ने मनरेगा की आत्मा को ही खत्म कर दिया। यह मांग आधारित कानून था। कोई भी बेरोजगार, दिहाड़ीदार और गरीब मजदूर पंचायत को आवेदन देकर रोजगार मांग सकता था। अब नए कानून में यह बंद कर दिया गया है। साथ ही फसल की पैदावार के महीनों में और आपदा के समय मनरेगा के कामों पर रोक लगा दी गई है। इतना ही नहीं मांग आधारित कामों का खर्चा राज्य सरकार पर डाला जा रहा है। यह ग्रामीण स्तर पर रोजगार के अवसरों को कम कर देगा और गरीब लोगों के हित में नहीं होगा।

आप जानते हैं कि गंभीर आर्थिक संकट के मोर्चे पर लड़ने के साथ-साथ हमें 2023 और 2025 में दो बार भीषण प्राकृतिक आपदा का सामना करना पड़ा। इस आपदा में जहां हमने कई बहुमूल्य जीवन गंवा दिए, वहीं 20 हजार करोड़ रुपये से अधिक का आर्थिक नुकसान भी उठाना पड़ा। हमने केन्द्र सरकार से बार-बार इस नुकसान की भरपाई का मामला उठाया। पर हमें एक बार भी पर्याप्त मदद नहीं मिली। लेकिन विपक्षी दल ने कभी अपनी जिम्मेदारी नहीं निभाई। प्रदेश के लोगों की आवाज बनने की बजाय विपक्ष ने लोकतांत्रिक तरीके से चुनी हुई हमारी सरकार को धन-बल से गिराने की साजिशें रचीं। लेकिन हमारी सरकार ने आत्मीय संवेदनशीलता के साथ आपदा पीड़ितों का दुःख-दर्द बांटा और दिन-रात उनके साथ खड़े रहे। सीमित संसाधनों के बावजूद हमने विशेष राहत पैकेज जारी कर मुआवजे की राशि कई गुणा बढ़ाई, जो देश में सबसे अधिक है। जिन परिवारों के घर आपदा में पूरी तरह बर्बाद हो गए हैं उन्हें नया घर बनाने के लिए 8 लाख रुपये की राशि का प्रावधान किया गया है। इसके अलावा उनके अन्य नुकसान की भरपाई के लिए भी बढ़ी हुई आर्थिक मदद दी जा रही है। दो बड़ी प्राकृतिक आपदाओं का सामना करने के बावजूद हिमाचल प्रदेश के लोगों को 2023 में आई आपदा के लिए पीडीएनए के रूप में मिलने वाली आर्थिक सहायता का आज भी इंतजार है।

भाईयो और बहनो, दूर-दराज इलाकों के लोगों को राहत प्रदान करने के लिए हमने 'सरकार गांव के द्वार' कार्यक्रम की शुरुआत की है। अब अपने छोटे-छोटे काम करवाने के लिए उन्हें जिला मुख्यालय या राज्य सचिवालय आने की जरूरत नहीं रही। मैं स्वयं और मेरे मंत्रिमंडल के सहयोगी दुर्गम इलाके के गांवों में रात्रि ठहराव कर लोगों की समस्याओं का मौके पर ही समाधान कर रहे हैं। सालों से लंबित राजस्व मामलों के समयबद्ध निपटारे के लिए नई पहल करते हुए विशेष राजस्व अदालतों का नियमित आयोजन किया जा रहा है। अब तक 5 लाख 10 हजार 257 राजस्व मामलों का निपटारा किया गया है, जो अपने आपमें एक रिकॉर्ड है। हमने माई डीड पोर्टल की शुरुआत की है, जिसके तहत राज्य में संपत्ति पंजीकरण की प्रक्रिया को पूरी तरह ऑनलाइन और पेपरलैस बनाया गया है। इस प्रणाली के तहत 55 हजार से ज्यादा रजिस्ट्री की जा चुकी है। लोगों की सुविधा के लिए राजस्व प्रबंधन पोर्टल पर राजस्व मामलों से जुड़ी जानकारी को अपडेट किया जा रहा है। अब तक 1 लाख 17 हजार मामलों के आदेश अपलोड किए जा चुके हैं।

हमारी सरकार 02 जनवरी 2026 के बाद तकसीम एवं दुरुस्ती मामलों की दो विशेष लोक अदालतें आयोजित कर चुकी है, जिनमें तकसीम एवं दुरुस्ती के कुल 219 मामले निपटाए गए। ये विशेष लोक अदालतें हर मास के अंतिम दो दिनों में आयोजित राजस्व लोक अदालतों से अलग होंगी।

हमारे लिए यह गर्व की बात है कि हाल ही में भारत सरकार ने स्टेट्स स्टार्टअप रैंकिंग 5.0 में हिमाचल प्रदेश को टॉप परफॉरमर के रूप में सम्मानित किया है। स्वास्थ्य क्षेत्र हमारी सरकार की दूसरी सबसे बड़ी प्राथमिकता है तथा 15 से 20 साल पुरानी मशीनों और उपकरणों को बदलने के लिए 3 हजार करोड़ रुपये खर्च करने का निर्णय लिया गया है। राज्य में पहली बार विश्व स्तरीय स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध करवाने हेतु आरम्भ की गई रोबोटिक सर्जरी एक क्रांतिकारी पहल है। शिमला के चमियाणा और टांडा मेडिकल कॉलेज में यह सुविधा प्रदान की जा चुकी है। जल्दी ही आईजीएमसी, शिमला, हमीरपुर और नेरचौक मंडी में भी रोबोटिक सर्जरी की सुविधा आरंभ की जाएगी। एम्स, दिल्ली के समान टांडा एवं शिमला चिकित्सा महाविद्यालयों और चमियाणा अस्पताल में 75 करोड़ रुपये की लागत से अत्याधुनिक निदान लैब शीघ्र स्थापित की जाएगी जिससे कई प्रकार के टैस्ट एक ही सैम्पल से हो जाएंगे। हमारी सरकार मरीजों को सरकारी अस्पतालों में दवाइयां उपलब्ध करवाने की दिशा में भी काम कर रही है। शिक्षा के क्षेत्र में सुधार हमारी सरकार की प्राथमिकताओं में शामिल है। हमने शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने तथा आज के समय की मांग के अनुरूप पाठ्यक्रम एवं शिक्षण प्रणाली में आवश्यक बदलाव लाने की दिशा में कदम उठाए हैं। इन प्रयासों से शिक्षा के क्षेत्र में हिमाचल प्रदेश ने पूर्ण साक्षर राज्य बनने का मील पत्थर भी हासिल कर लिया है।

हमारी सरकार ने प्रदेश के सरकारी स्कूलों को सीबीएसई से संबद्ध करने का निर्णय लिया है। पहले चरण में 130 से अधिक स्कूलों को इसमें शामिल करने की प्रक्रिया जारी है। राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण के अनुसार हिमाचल को देश में 5वां स्थान मिला है, जबकि 2021 में हिमाचल 21वें स्थान पर था। इसके अलावा बच्चों के पढ़ने और सीखने के स्तर में भी हिमाचल ने पहला स्थान प्राप्त किया है। पिछली भाजपा सरकार ने राजनीतिक लाभ के लिए चुनावी वर्ष के आखिरी नौ महीनों में 900 से ज्यादा शिक्षण तथा स्वास्थ्य संस्थान खोले और 5000 करोड़ रुपये की मुफ्त रेवड़ियां बांटी। लेकिन इनके लिए न तो बजट का प्रावधान किया गया और न ही संसाधन जुटाए गए। इसलिए हमारी सरकार को एक हजार से अधिक स्कूलों के युक्तिकरण का कड़ा किन्तु विवेकपूर्ण फैसला लेना पड़ा। इससे जहां गैर-जरूरी खर्चों में कटौती हुई, वहीं अध्यापकों की पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित होने से छात्रों को बेहतर शिक्षा सुनिश्चित हुई है। हर विधानसभा क्षेत्र में अत्याधुनिक सुविधाओं वाले राजीव गांधी राजकीय आदर्श डे-बोर्डिंग विद्यालय स्थापित किए जा रहे हैं। मेरा मानना है कि देखकर हम चीजों को और अच्छे ढंग से सीख सकते हैं। इसलिए हमने अध्यापकों और विद्यार्थियों के लिए अन्तरराष्ट्रीय शैक्षणिक भ्रमण की शुरुआत की है। हमने युवाओं को उच्च और व्यावसायिक शिक्षा के लिए सिर्फ एक प्रतिशत पर लोन देने के लिए डॉ. वाई एस परमार विद्यार्थी ऋण योजना शुरू की है। इसमें बच्चों को 20 लाख रुपये तक का ऋण मिल सकता है। इस ऋण योजना में साढ़े सात लाख रुपये तक के ऋण पर कोई भी गारंटी देने की जरूरत नहीं है और साढ़े सात लाख रुपये से 20 लाख रुपये तक के ऋण की गारंटी प्रदेश सरकार देगी।

अनाथ बच्चों को सहारा प्रदान करने के उद्देश्य से मुख्यमंत्री सुख-आश्रय योजना के अंतर्गत सरकार ने एक अभिभावक के रूप में इन बच्चों को चिल्ड्रेन ऑफ द स्टेट का दर्जा प्रदान किया है। ऐसे लगभग 6 हजार बच्चों की शिक्षा, स्टार्ट-अप आरंभ करने, घर बनाने के लिए भूमि एवं धनराशि सहित अन्य सुविधाएं प्रदान करने की जिम्मेदारी सरकार उठा रही है। हमारी सरकार ने दिव्यांग माता-पिता के बच्चों तथा अर्द्ध अनाथ बच्चों को भी इस योजना में शामिल किया है। सामाजिक सुरक्षा पेंशन योजना के तहत पिछले तीन वर्षों में 99 हजार 799 मामले मंजूर किए गए हैं। साथ ही हमने पैंशन को समयबद्ध तरीके से लाभार्थियों को प्रदान करने का भी प्रावधान कर दिया है।

प्रिय प्रदेशवासियो, प्रदेश में प्राकृतिक, धार्मिक, साहसिक, आध्यात्मिक और स्वास्थ्य पर्यटन को बड़े स्तर पर प्रोत्साहन दिया जा रहा है। कांगड़ा जिला को प्रदेश की पर्यटन राजधानी के रूप में विकसित किया जा रहा है और देहरा उप-मण्डल के बनखंडी में दुर्गेश अरण्य वन्यप्राणी उद्यान स्थापित करने का कार्य प्रगति पर है। कांगड़ा हवाई अड्डे के विस्तार सहित प्रदेश भर में हैलीपोर्ट, हैलीपैड, रोप-वे निर्माण, ईको पर्यटन स्थल, स्काई वॉक ब्रिज आदि के निर्माण से पर्यटन उद्योग को बढ़ावा दिया जा रहा है।

हम अपने युवाओं के बेहतर भविष्य और उन्हें रोजगार के पर्याप्त अवसर प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। युवाओं के लिए स्वरोजगार और रोजगार के लिए नए अवसर सृजित किए गए हैं। पिछले तीन वर्षों में सरकारी क्षेत्र में 24 हजार 20 युवाओं को विभिन्न पदों पर नियुक्तियां दी गई हैं। इसकी तुलना में पूर्व सरकार ने अपने पांच वर्षों के कार्यकाल में मात्र 20 हजार पदों पर नियुक्तियां की थीं। सरकारी क्षेत्र के अलावा हमारी सरकार ने अब तक निजी क्षेत्र में भी 56 हजार 855 युवाओं को रोजगार प्रदान किया है।

हमारी सरकार ने वर्षों से संबित करुणामूलक आधार पर नियुक्तियों का मामला भी आगे बढ़ाया है। हमने करुणामूलक रोजगार नीति में संशोधन किया है और प्रति परिवार आय की पात्रता को ढाई लाख रुपये बढ़ाकर तीन लाख रुपये किया है। इन नियुक्तियों के लिए अब 45 वर्ष से कम आयु की विधवाओं और अनाथ आवेदकों को प्राथमिकता दी जा रही है। नीति के तहत सरकार ने ऐसे पात्र 980 आवेदकों को नौकरियां प्रदान की हैं।

आज पूरे देश और दुनिया में युवाओं में नशे का बढ़ता चलन चिंता का विषय है। राष्ट्रीय नार्कोटिक कोऑर्डिनेशन पोर्टल के मुताबिक देश की 2.1 प्रतिशत आबादी सिंथेटिक ड्रग्स की चपेट में है। भारत दुनिया का सबसे बड़ा आबादी वाला देश है। इसलिए 2 प्रतिशत आबादी का अर्थ है तीन करोड़ लोग जिसमें अधिकांश युवा हैं। हमने युवाओं को इस बुराई से बाहर निकालने के लिए चिट्टा मुक्त हिमाचल अभियायन चलाया है जिसमें युवाओं का भरपूर सहयोग मिल रहा है। हम सभी मिलकर इस बुराई को समाप्त करेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

25 जनवरी, 1971 को हमें पूर्ण राज्य बनने का गौरव प्राप्त हुआ था। इस शुभ अवसर पर मैं चाहूंगा कि हम आज यह शपथ लें कि हम सब मिल कर चिट्टा मुक्त हिमाचल का निर्माण करें। देश का युवा अगर नशे से ग्रस्त होगा तो प्रदेश और देश का विकास नहीं हो सकता। इसके लिए हम नशे के तस्करों और युवाओं को अपने जाल में फंसाने वाले अपराधियों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई करेंगे। हम नशा छोड़ने वालों के उपचार और पुनर्वास के लिय एक विश्व स्तरीय केन्द्र सिरमौर के कोटला बड़ोग में बना रहे हैं। इस केन्द्र के पहले चरण का कार्य शुरू कर दिया गया है। यह केन्द्र लगभग 100 करोड़ रुपये की लागत से तैयार होगा। हमने चिट्टे की सूचना देने वालों को इनाम देने की घोषणा भी की है।

मुझे पूरा विश्वास है कि आपके सहयोग से हम प्रदेश को अगले साल तक आत्मनिर्भर और वर्ष 2032 तक सबसे समृद्ध राज्य बनाने का अपना संकल्प पूरा करने में कामयाब होंगे। हम मिलकर एक ऐसे खुशहाल हिमाचल की सशक्त नींव रखेंगे, जिससे प्रदेश का संपूर्ण विकास होगा और समाज के हर वर्ग को फायदा होगा। समस्त प्रदेशवासियों को एक बार फिर पूर्ण राज्यत्व दिवस की हार्दिक बधाई और शुभकामनाएं।

जय हिंद, जय हिमाचल!

हिमाचल प्रदेश के पूर्ण राज्यत्व दिवस की हार्दिक शुभकामनाएं

"हमारी सरकार ने व्यवस्था परिवर्तन को सुशासन के मूल मंत्र के रूप में आत्मसात करते हुए संसाधन सृजन कर हरित, आत्मनिर्भर और नशामुक्त हिमाचल बनाने का संकल्प लिया है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कई साहसिक और ऐतिहासिक फैसले लिए गए हैं जिनके परिणाम आने शुरू हो गए हैं। आइए हम सब मिलकर हिमाचल को समृद्ध और खुशहाल राज्य बनाने में अपना सहयोग दें।"

ठाकुर सुखविन्द्र सिंह सुक्खू
मुख्यमंत्री, हिमाचल प्रदेश

हिमाचल सरकार के ऐतिहासिक निर्णय

- ओपीएस बहाल, देश का पहला राज्य।
- महिलाओं को चरणबद्ध तरीके से 1500 रुपये प्रतिमाह की सम्मान राशि।
- 680 करोड़ रुपये की 'राजीव गांधी स्टार्ट–अप योजना' आरम्भ।
- ई–टैक्सी पर 50 प्रतिशत अनुदान।
- प्राकृतिक खेती से उगाए उत्पादों पर एमएसपी देने वाला देश का पहला राज्य।
- दूध पर सर्वाधिक समर्थन मूल्य देने वाला राज्य।
- 6000 अनाथ बच्चे बने चिल्ड्रन ऑफ द स्टेट।
- विशेष राजस्व अदालतों में 5,10,257 मामलों का निपटारा।

सुन्दर–सुगम हिमाचल

- कांगड़ा जिला बना प्रदेश की पर्यटन राजधानी।
- कांगड़ा हवाई अड्डा होगा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का।
- गोविन्दसागर में पहली बार क्रूज़ शिकारा, हाउस बोट, जैट–स्की, हाई–टैक मोटर बोट और वॉटर स्कूटर का रोमांच।

चिट्टामुक्त हिमाचल

- 15 नवम्बर, 2025 को शिमला से एंटी चिट्टा वाकाथॉन जन आंदोलन का शुभारम्भ। शिमला, धर्मशाला, हमीरपुर, बिलासपुर में वाकाथॉन आयोजित।
- नशा तस्करी की जांच के लिए स्पेशल टास्क फोर्स गठित, नशा तस्करों की सम्पत्तियां की कुर्क, अवैध सम्पत्तियों पर बुलडोजर। इंस्पेक्टर सहित 11 पुलिस कर्मचारी नौकरी से बर्खास्त।

स्वस्थ हिमाचल

- एआईएमएसएस, चमियाना तथा डॉ. राजेन्द्र प्रसाद राजकीय चिकित्सा महाविद्यालय, टांडा में रॉबोटिक सर्जरी की ऐतिहासिक शुरूआत। ऑटोमैटिक लैब की जाएंगी स्थापित।

शिक्षित हिमाचल

- सभी सरकारी स्कूलों में पहली कक्षा से अंग्रेजी मीडियम।
- पूर्ण साक्षर राज्य बना हिमाचल।
- 42 विधानसभा क्षेत्रों में राजीव गांधी राजकीय आदर्श डे–बोर्डिंग स्कूलों के निर्माण को स्वीकृति।
- राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण-2024 में प्रदेश को समग्र राष्ट्रीय रैंकिंग में पांचवां स्थान मिला, वर्ष 2021 के 21वें स्थान से उल्लेखनीय सुधार।

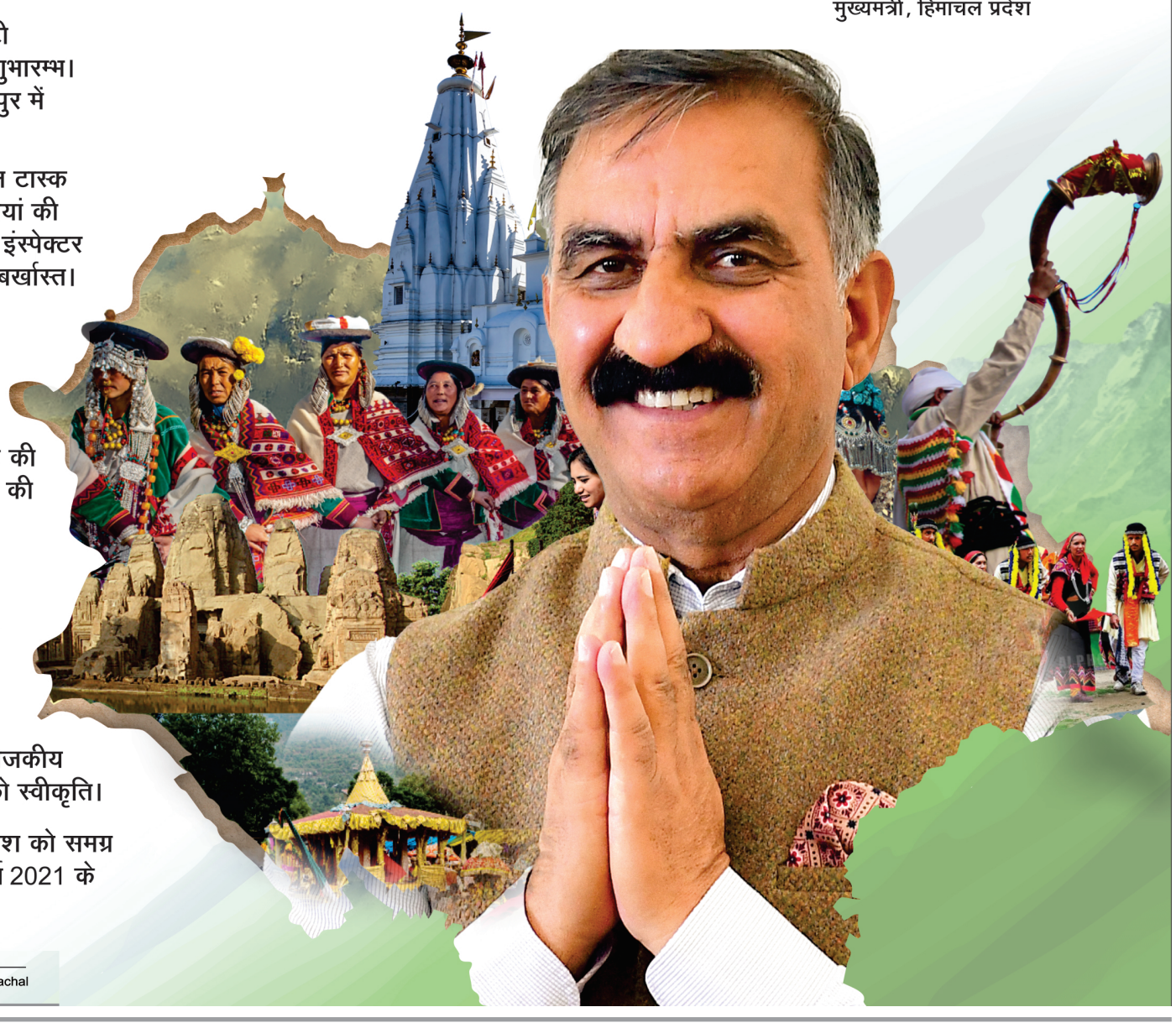

सूचना एवं जन संपर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश सरकार www.himachalpr.gov.in HimachalPradeshGovtIPRDept diprhimachal

Published Date 01February, 2026 (Sunday), Posted at LPC Delhi RMS, Delhi-06, Posting Days Friday and Saturday

सद्भाव के गले में कुंभ राजनीति की फांस

फोटो: नजीब शाह

जो नदी सदियों से समुदायों को एकजुट रखने में सहायक थी, अब उसे ही विभाजक रेखा के तौर पर किया जा रहा इस्तेमाल

के. ए. शाजी

थिरुनावया में मुंह-अंधेरे, जब भरतपुझा नदी एकदम शांत होती है, कमल उगाने वाले मुसलमान चुपचाप नदी के पास के उथले तालाबों में संध अंदाज में उतरते हैं। डंठल काटते हैं, फूल इकट्ठा करते हैं और उसकी मिट्टी धोते हैं। पौ फूटते-फूटते गुलाबी और सफेद कमल के बंडल ऑटो-रिक्शा और छोटे ट्रकों में लाद दिए जाते हैं। ये केरला के गुरुवायूर, सबरीमाला, कोडुंगल्लूर स्थित मंदिरों से लेकर पड़ोसी राज्यों तमिलनाडु और कर्नाटक के मंदिरों तक पहुंचाए जाते हैं।

यहां के व्यापारियों का कहना है कि जब दो साल पहले प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी गुरुवायूर मंदिर आए थे, तब भी भगवान को चढ़ाए गए कमल के फूल शायद थिरुनावया के इन्हीं तालाबों से आए होंगे।

कोई नाटकीयता नहीं। सद्भाव पर न कोई बड़े बोल, न साथ-साथ रहने का महिमा-मंडन। सब सहज है। मुस्लिम हाथों से होते हुए ये कमल पूजा-अर्चना में इस्तेमाल होते हैं। यह थिरुनावया की रोजाना की हकीकत है। ऐसी परंपरा को संजोने वाले इस नदी के किनारे बसे शहर को जिस तरह के विवाद ने हाल के समय में घेरा, वह वाकई अजीब है।

थिरुनावया में महा माघ महोत्सव (18 जनवरी से 3 फरवरी) को आयोजकों और राजनीतिक वर्ग के कुछ लोगों ने केरला के पहले 'कुंभ मेले' के तौर पर पेश किया। पहला पवित्र स्नान होता, इसके पहले ही तूफान खड़ा हो गया। प्रशासन ने जब नदी पर अस्थायी पुल बनाने से रोका तो इसे मुस्लिम बहुल मलप्पुरम में हिन्दू धर्म पर खतरे के सबूत के तौर पर पेश कर दिया गया। टीवी स्टूडियो में इस बात को बार-बार दोहराए जाने से यह दावा सच भी लगने लगा, लेकिन जमीन पर यह दावा जल्द ही झूठा साबित हो गया।

केरला की सांस्कृतिक स्मृति में थिरुनावया की खास जगह है। भरतपुझा नदी, जिसे नीला नदी भी कहते हैं, के किनारे बसा थिरुनावया कभी 'मामंकम' का आयोजन स्थल हुआ करता था। यह हर बारह साल में होने वाली एक मध्ययुगीन सभा थी। 'मामंकम' शाब्दिक अर्थों में कोई 'धार्मिक' उत्सव नहीं था। यह व्यापार, राजनीति और भव्यता का संगम था। पूरे दक्षिण भारत से तीर्थयात्री, व्यापारी, कवि और योद्धा नदी के चौड़े रेतीले किनारे पर इकट्ठा होते थे। भरतपुझा नदी इस सभा का केंद्र थी। इसने समुदायों को बांटा नहीं, बल्कि उन्हें एक साथ जोड़ने का काम किया।

18वीं सदी के अंत तक राजनीतिक उथल-पुथल और औपनिवेशिक दखलअंदाजी के कारण मामंकम का आयोजन तो रुक गया लेकिन तिरुनावया ने संगम स्थल के तौर पर अपनी पहचान नहीं खोई। मुस्लिम और ईसाई बस्तियां बढ़ीं, जिससे एक ऐसा शहर बना जहां साझा रहन-सहन अपवाद नहीं, आम बात थीं। वैष्णव परंपरा के 108 दिव्य देशम में से एक यहां स्थित नवमुकुंद मंदिर में आज भी भक्त उमड़ते हैं।

आज, थिरुनावया की सामाजिक जिंदगी उस इतिहास की साक्षी है। मंदिर के त्योहार ढोल बजाने वालों, इलेक्ट्रीशियन और टेक्नीशियन के बिना पूरे नहीं होते, जो अमूमन मुस्लिम ही होते हैं। सबसे ज्यादा मांग वाले चेंडा कलाकारों और आतिशबाजी विशेषज्ञों में कई मुस्लिम हैं। मस्जिद के पुनरुद्धार में आम तौर पर हिन्दू मजदूर काम करते हैं। चर्च की दावतें आम सड़कों और बाजारों तक फैल जाती हैं। ऐसे इंतजाम अनोखी बात नहीं, यहां जिंदगी ऐसे ही चलती है।

ऐसे माहौल में महा माघ महोत्सवम शुरू हुआ। त्योहार के आयोजकों ने इसे आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण और हिन्दू अनुष्ठान कैलेंडर में थिरुनावया को उसकी ऐतिहासिक महत्ता वापस दिलाने का प्रयास बताया। भारत के सबसे पुराने अखाड़ों में से एक जूना अखाड़े के महामंडलेश्वर स्वामी आनंदवनम भारती के नेतृत्व में कार्यक्रम शुरू हुआ जिनमें रोजाना पवित्र स्नान, यज्ञ और हवन, आध्यात्मिक प्रवचन, सांस्कृतिक प्रस्तुति, सामुदायिक भोजन और मामंकम परंपरा से जुड़े स्मारक अनुष्ठान शामिल थे।

महत्वाकांक्षा साफ दिख रही थी। कुंभ की भाषा और प्रतीकों का इस्तेमाल करके आयोजकों ने थिरुनावया को उत्तर भारतीय तीर्थ स्थलों के दबदबे वाले राष्ट्रीय धार्मिक नक्शे पर जगह दिलाने की कोशिश की।

जनवरी के शुरू में प्रशासन ने आयोजकों को भरतपुझा नदी के रेतीले किनारों पर निर्माण कार्य रोकने का निर्देश दिया था। इसमें एक अस्थायी पैदल पुल का निर्माण और मशीनों से जमीन को समतल करना शामिल था। अधिकारियों ने स्पष्ट अनुमति न होने, नदी संरक्षण नियमों का उल्लंघन और सार्वजनिक सुरक्षा के बारे में चिंताओं का हवाला दिया। यह मेमो साफ तौर पर सिर्फ नदी किनारे की निर्माण गतिविधियों के लिए था। इसने धार्मिक त्योहार या अनुष्ठानिक स्नान पर रोक नहीं लगाई थी। लेकिन यह अंतर शोर-शराबे में जल्दी ही खो गया।

भाजपा के वरिष्ठ नेता कुम्मनम राजशेखरन ने सार्वजनिक रूप से स्टॉप मेमो को अवैध और धार्मिक स्वतंत्रता का उल्लंघन बताया। उन्होंने आरोप लगाया कि यह कार्यक्रम को खराब करने और भक्तों का मनोबल गिराने की साजिश है। जैसे ही राजनीतिक माहौल गरमाया, मलप्पुरम जिला कलेक्टर वी. आर. विनोद ने दखल दिया। प्रशासन ने सुरक्षा और पर्यावरण नियमों का सख्ती से पालन करने की शर्त पर अनुमति दे दी।

कलेक्टर ने 21 बिंदुओं वाला एक विस्तृत सुरक्षा निर्देश जारी किया। इसमें सक्षम एजेंसियों द्वारा अस्थायी पुल का सर्टिफिकेशन, किसी भी समय उस पर मौजूद लोगों की संख्या की सीमा, चौबीसों घंटे लाइफगार्ड और मेडिकल टीमों की व्यवस्था, आपात निकासी योजना, साफ-सफाई सुविधाएं और भीड़ प्रबंधन व्यवस्था शामिल थी। आयोजन समिति को नियमों का पालन सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी दी गई।

बहस से जो चीज गायब हो गई, वह थी नदी।

भरतपुझा केरला की दूसरी सबसे लंबी नदी है। इसकी हालत बेहद खराब है। दशकों से रेत खनन, धारा के ऊपरी भाग में मानवीय दखलअंदाजी के कारण पानी का बहाव कम हो गया है और अतिक्रमण-प्रदूषण ने इसे पर्यावरणीय दृष्टि से बुरी स्थिति में पहुंचा दिया है। इसके चौड़े, खुले रेतीले किनारे तनाव के लक्षण हैं।

पर्यावरण कार्यकर्ता बताते हैं कि नदी के किनारों पर बड़ी संख्या में लोगों के इकट्ठा होने से असली खतरा होता है। अस्थायी ढांचे रेत की बनावट को अस्थिर कर सकते हैं। ज्यादा लोगों के आने-जाने से कटाव तेज हो सकता है, लोगों की बड़ी तादाद से कचरा भी ज्यादा पैदा होगा जो पहले से ही खस्ताहाल नदी को और ज्यादा प्रदूषित कर देगा। इन चिंताओं का इससे कोई वास्ता नहीं कि भीड़ धार्मिक, राजनीतिक या व्यावसायिक है।

इस विवाद को जो बात और ज्यादा खराब बनाती है, वह है इसमें मलप्पुरम का शामिल होना। मुस्लिम बहुल जिला होने की वजह से मलप्पुरम लंबे समय से सांप्रदायिक रूढ़िवादिता का आसान निशाना रहा है। इस मामले में, प्रशासनिक कार्रवाई को फौरन हिन्दू त्योहार के प्रति मुस्लिम विरोध के सबूत के तौर पर पेश किया गया। हालांकि इस दावे का कोई तथ्यात्मक आधार नहीं है। किसी भी मुस्लिम संगठन ने त्योहार का विरोध करते हुए कोई बयान जारी नहीं किया। कोई विरोध प्रदर्शन नहीं हुआ, कोई औपचारिक आपत्ति नहीं आई, कोई लामबंदी नहीं हुई।

वाट्सएप फॉरवर्ड, ऑनलाइन पोस्ट के जरिये अफवाह फैलाई गई कि मुसलमान केरल के कुंभ को रोक रहे हैं, कि मलप्पुरम हिन्दू पूजा के खिलाफ है, कि नदी के लिए चिंता दरअसल एक 'मुस्लिम साजिश' है। मुख्यधारा के मुस्लिम संगठनों और नेताओं ने इस विवाद पर कमेंट न करके इसे अहमियत न देने का फैसला किया, यह मानते हुए कि यह बाहर से थोपा गया हंगामा है।

मलप्पुरम के लेखक और डॉक्यूमेंट्री फिल्म निर्माता शाहजहां थोप्पिल ने कहाः 'मलप्पुरम सद्भाव और मिलजुलकर रहने की जगह है। यहां कोई नफरती एजेंडा टिक नहीं सकता। जो बताया जा रहा है, उसका इस जगह की असलियत से कोई लेना-देना नहीं।'

उस जीती-जागती हकीकत की बानगी आसानी से मिल जाती हैं। अंगदीपुरम में, जहां ऐतिहासिक तिरुमंधमकुन्नू मंदिर है, स्थानीय मुस्लिम समुदायों ने पारंपरिक रूप से मंदिर के जुलूसों की रक्षा करने में भूमिका निभाई है, खासकर जब दूसरी जगहों पर सांप्रदायिक तनाव बढ़ा होता है। ऐसे कामों पर शायद ही कभी ध्यान जाता है क्योंकि वे टकराव के नैरेटिव को बिगाड़ देते हैं। जिले की राजनीतिक संस्कृति ने भी इसमें भूमिका निभाई है। इंडियन यूनियन मुस्लिम लीग, जो दशकों से मलप्पुरम में एक बड़ी राजनीतिक ताकत है, ने लगातार खुद को सांप्रदायिक शांति में एक हितधारक के रूप में पेश किया है, और संवेदनशील पलों में तनाव कम करने के लिए काम किया है।

बाढ़ और दूसरी आपदाओं के दौरान मलप्पुरम ने बार-बार मिलकर काम करने की ऐसी क्षमता दिखाई है जो धर्म की सीमाओं से परे है। मस्जिदों ने अपने हॉल को राहत कैंप के तौर पर खोला है। मंदिरों ने सामूहिक किचन चलाए हैं। चर्चों ने मेडिकल मदद और पुनर्वास में भूमिका निभाई है।

सुबह-सुबह, थिरुनावया के तालाबों में कमल के फूल अब भी चुपचाप खिलते हैं। भरतपुझा नदी भी बहती रहती है। नारे शांत होने और सोशल मीडिया के तूफान के गुजर जाने के बाद भी नदी ऐसी ही रहेगी। इसलिए, उम्मीद कर सकते हैं कि साथ-साथ रहने की जो आदतें इसने पाली हैं, वे भी बनी रहेंगी। ■

अनावश्यक विवाद थिरुनावया में भरतपुझा नदी में खिले कमल के फूल चुनता मुस्लिम नौजवान जिन्हें केरला से लेकर तमिलनाडु और कर्नाटक के मंदिरों में चढ़ाया जाता है

मुस्लिम हाथों से होते हुए कमल के फूल पूजा-अर्चना में इस्तेमाल होते हैं। यह थिरुनावया की रोजाना की हकीकत है। ऐसी परंपरा को संजोने वाले इस नदी के किनारे बसे शहर को जिस तरह के विवाद ने हाल के समय में घेरा, वह अजीब है

Nehru centre

नेहरू सेंटर ऑडिटोरियम

वेस्टर्न एक्सप्रेसवे पर
मुंबई के हृदयस्थल में,
बीकेसी से सटे,
एयरपोर्ट के पास

इन सबके लिए सर्वोत्तमः
- कॉरपोरेट/एचआर मीटिंग, सेमिनार या ट्रेनिंग सेशंस
- व्याख्यान
- बुक लॉन्च/ बुक रीडिंग
- पैनल डिस्कशन
- साहित्यिक/सांस्कृतिक कार्यक्रम

ऑडिटोरियम उपलब्ध है
-पूरा दिन सुबह 10 बजे से शाम 8 बजे
-आधा दिन सुबह 10 बजे से दोपहर 2 बजे या शाम 4 बजे से शाम 8 बजे

बुकिंग के लिए कृपया संपर्क करें: +91 22-26470102, 8482925258
या हमें लिखें: contact@nehrucentre.com
नेहरू सेंटर ऑडिटोरियम, दूसरा फ्लोर, एजेएल हाउस, 608/1ए, प्लॉट नं. 2, एस. नं. 341, पीएफ ऑफिस के पास, बांद्रा, मुंबई- 400051